

प्रकाशक—

पण्डित भगवदत्त वी० ए०

स्वाध्याय-मन्दन

गोहनलाल रोड, लाहोर

प्रथम संस्करण—एक हजार

मूल्य—एक रुपया

प्राक्कथन

ई वर्षों से मैं वैदिक वाङ्मय का इतिहास लिख रहा हूँ। उस के नाग प्रकाशित हो चुके हैं। उस को लिखते-लिखते मैंने भारत के इतिहास की सामग्री भी एकत्र की। भारत के इतिहास पर भी पुस्तकें आज तक प्रकाशित हुई हैं, उन में प्राचीन इतिहास छोड़ ही दिया जाना है। केवल पाजिटर और जयचन्द्र जी ने अपने ग्रन्थों में प्राचीन इतिहास लिखने का यत्न किया है। हमारे विद्यार्थी संस्कृत के पुराने ग्रन्थ या उनके अनुवाद पढ़ते हैं तो वे मान्धाता, नीप, भरत, रघु, द्रुप्यन्त शन्तनु आदि के नाम उनमें देखते हैं। पर धुनिक इतिहास-ग्रन्थों में इन व्यक्तियों का उल्लेख भी नहीं मिलता। इस छोटे-से इतिहास-ग्रन्थ में इस त्रुटि को दूर करने का प्रयत्न किया है।

मौर्य-काल ल लेकर श्रीहर्ष के समय तक के इतिहास में बड़ी नई चीजें चुकी हैं। इतिहास के पाठ्य-ग्रन्थों में उस का भी अभाव ही है। उस खोज का भी इस ग्रन्थ में उपयोग किया है। मौर्य काल से श्रीहर्ष भारत में साम्राज्य के पीछे साम्राज्य बने, यह इस इतिहास के पढ़ने पर ही जायगा। आजकल की पाठ्य-पुस्तकों में इस काल के पन्ने नट्ती उलट जाते हैं। सम्बद्ध इतिहास की धारा उनमें टूटी सी प्रतीत है। इस दोष को भी दूर करने का प्रयास किया गया है।

सलमानी और राजपूत इतिहास के सम्बन्ध में गौरीशङ्कर हीराचन्द्र सा ने एक प्रामाणिक ग्रन्थ लिखा है। मैंने उन के ग्रन्थ से पुरा का कर राजपूत इतिहास उस के स्वच्छ रूप में लिखा है। सभी इतिहास-ग्रन्थों में इस काल के वर्णन में मैं कई निराधार बातें पाती हूँ।

स प्रकार यह छोटी सा पुस्तक इतिहास के चम्पक-अवस्था से मैंने इतिहास की आधुनिक पाठ्य पुस्तकें में जोड़ा है और उन में कहीं सहायता ली है। आशा है इस पुस्तक के पढ़ने से विद्यार्थी उठावेंगे।

भाग-१

भाग ही है
म सुगन्धित वा, ॥
मन्त्र नदिया मे ॥
भूमि संसार के प्र
प्रकृति ने उमर ॥
नितनी कि अन्त नि

मीमा—॥१॥

वसन्तमाला है ॥ १॥
तादृशी महा दिग्ग
मन्त्र महा भाग
पश्चिम म अक्षर निग
इन मन्त्री तदा ॥
जन मन्त्र्या ॥
स्य अक्षर मन
तदा नेत्रमन्त्र ॥

ओम्

भारतवर्ष का इतिहास

पहला अध्याय

भारत की स्थिति—उत्तर-पश्चिम और उत्तर-पूर्व में पर्वतों
न सुरजित पूर्व, दक्षिण और पश्चिम में विशाल समुद्रों से घिरी हुई
नजल नदियों से बहुधा सिञ्चित वनों और खेतों से श्यामल भारत-
भूमि सत्तार के प्रदेशों में एक महाद्वीप का-सा स्थान रखती है।
कृति ने इसकी सीमा इतनी स्वाभाविक और सुन्दर बना दी है
जितनी कि अन्य किसी देश की दिखाई नहीं देती।

सीमा—भारत के उत्तर में गिरिराज हिमालय की लम्बी
श्रृंखला है उसकी लम्बाई १६०० मील है। उसकी ऊँची-ऊँची
चोटियाँ सदा बर्फ से ढकी रहती हैं। दक्षिण में लक्षद्वीप और
मालदीव समूह के द्वीपों और बड़े-बड़े द्वीपों की खाड़ी तथा
पश्चिम में अरब सागर, बंगाल की खाड़ी और ब्रह्मपुत्र की खाड़ी तथा
इन समुद्री तटों के विस्तार लगभग ३००० मील है।

जन-संख्या और क्षेत्रफल—भारत की जनसंख्या इस
क्षेत्र में ३६५ मे करोड़ ३५ करोड़ के लगभग है
एक का क्षेत्रफल १८०० ३५० वर्ग मील है

भारत के नाम—अत्यन्त प्राचीन काल में जब कि वज्राल का बहुत सा भाग समुद्र रूप ही था, और सिन्ध तथा पञ्जाब के प्रदेश अभी पानी से बाहर निकले ही थे, तब आधुनिक संयुक्त प्रान्त के भाग को यहाँ के निवासी आर्यावर्त नाम से पुकारते थे। पीछे जब अनेक भूमियाँ समुद्रों से बाहर निकल आई, और उनका आकार आधुनिक भारत के कुछ समान हुआ, तब इस देश का नाम भरतखण्ड अथवा भारतवर्ष हुआ। तत्पश्चात् अनेक आर्य लोग उत्तर और दक्षिण के समूचे प्रदेश को भी आर्यावर्त कहने लगे। मुसलमान लेखक भारतवर्ष या आर्यावर्त के स्थान में इसे हिन्दुस्तान के नाम से लिखते आए हैं।

भारत के भौगोलिक विभाग—भूगोल की दृष्टि से भारत के तीन मुख्य भाग हैं—

१—हिमालय का पार्वत्य प्रदेश। इस में काश्मीर, नैपाल, आदि देश हैं। इसकी लम्बाई कोई १६०० मील और चौड़ाई १५० से २०० मील तक है। प्राचीन काल से आर्यों के अतिरिक्त यहाँ गन्धर्व, राजस, और किन्नर आदि अन्य अनेक जातियाँ भी बसती रही हैं। उनके अपने अपने राज्य भी रहे हैं। यद्यपि हिमालय की दीर्घ पर्वतमाला के कारण कोई विदेशी सुगमता से यहाँ नहीं आसकता, तथापि हिमालय में अनेक ऐसे पर्वत-द्वार या दर्रे हैं जिन के मार्ग से यहाँ के लोग बाहर जाते रहे हैं और विदेशीय लोग यहाँ आते रहे हैं।

२—उत्तरीय भारत के क्षेत्र। इनका आरम्भ है हिमालय के पार्वत्य स्थान के अन्त से और समाप्ति है विन्ध्या पर्वत पर। प्राचीन काल में यह क्षेत्र तीन उप-विभाग में बँटा हुआ था। पूर्व के भाग में कलिङ्ग या उड़ीसा, बङ्ग और

भारतवर्षे वा इति नाम्ना

[illegible]

भारत की जाति—१. आर्य जाति भारत में प्राचीनतम

२. चीनी यात्री—इन में से तीन बहुत प्रसिद्ध हैं, अर्थात् फाह्यान, युवन च्वङ्ग या ह्युनसांग और इत्सिंग ।

३. मुसलमान यात्री—नवसे पुराने मुसलमान यात्री मुलेमान मौडागर का ग्रन्थ अब हिन्दी में भी मिलता है । उनके पश्चात् इब्नहिं अलब्लूकी का बृहत् ग्रन्थ इतिहास का एक खजूना है ।

४. ईसाई यात्री—इन में मनोचो और बरनियर आदि के नाम स्मरणीय हैं ।

आर्यों का निवासस्थान—जिन मूल आर्य जाति का उद्ग भारत के आर्य हैं उसी जाति का अद्भुत योरुप के आधुनिक अङ्ग्रेज, फ्रैंस और जर्मन आदि लोग हैं । कई विद्वानों का कहना है कि वह मूल आर्य जाति कभी मध्य एशिया में वास करती थी । परन्तु दूसरे विद्वानों का यह धारणा है कि इस विषय में निश्चय में कुछ कहा नहीं जा सकता क्योंकि भारत में आर्य लोग अत्यन्त प्राचीन काल से ही रहे आते हैं । परलोकगत भारतीय विद्वान वाल गङ्गाधर तिलक का मत है कि आर्य जाति का मूल स्थान उत्तरीय एशिया वहाँ से वह समार के अन्य स्थानों में फैली

तीनरा अध्याय

वैदिककाल

चाणक्य—१००० ई. पू. ३०० ई. पू. ३०० ई. पू. ३०० ई. पू.

१. अशोक के 'काल' २०० ई. पू. २०० ई. पू. २०० ई. पू. २०० ई. पू.

२. अशोक के 'काल' २०० ई. पू. २०० ई. पू. २०० ई. पू. २०० ई. पू.

३. अशोक के 'काल' २०० ई. पू. २०० ई. पू. २०० ई. पू. २०० ई. पू.

शिकोह, जर्मन विद्वान् शौपनहार और अन्य बड़े बड़े परिचित इन उपनिषदों की शिक्षा पर सुन्ध रहे हैं।

(घ) सूत्रग्रन्थ—इन में यज्ञों का बड़ा विस्तृत वर्णन मिलता है। ब्राह्मण ग्रन्थों के साथ ये पद्धति का काम देने हैं। इनका एक भाग गृह्यसूत्र हैं। आज भी आर्य लोगों के गृहस्थ के सब संस्कार इन्हीं गृह्यसूत्रों के आधार पर होते हैं।

(ङ) उपवेद—आयुर्वेद धनुर्वेद, अथर्ववेद और गन्धर्ववेद। इन में से आयुर्वेद के द्वारा ही रोग निवारण की विद्या भारत में फैली है। अथर्ववेद मानो राजनीति का स्रोत है।

(च) वेदांग—ये गिनती में छह हैं। शिक्षा, कल्प, निस्त व्याकरण, ज्योतिष, छन्द। वेद के अध्ययन में इनसे बड़ी सहायता प्राप्त होती है।

वैदिक आर्य—वैदिक आर्य दीर्घजीवी सुगठित शरीरवाले, नारोग, परम सत्यवक्ता, ऋषियों और वेद का परम आदर करने वाले तथा विद्यावान् थे। उनकी स्त्रियों भी प्रायः विदुषी होती थीं। स्त्रियों का बड़ा आदर था। वैदिक आर्य बड़ी आयु में विवाह करने थे। उनके घर धन-धान्य में पूरा थे। ब्राह्मण न्यायी आचारवान् और विद्याभ्यासी थे। क्षत्रिय दलवान् और सदा सन्तु के लिए तैयार रहते थे। राजवंश में भागने का कभी नाम न लेते थे। वैश्य न्यायार में चतुर और समृद्धि के पत्र थे। शूद्रों की सख्त शक्ति स्मरण में सब वक्ता पर दमन कर सके थे। लोग इनके सम्मान में कि-यार इन्हीं के नाम भी न ले सकें। इनके सम्मान में सब लोग इनके आज्ञाकारी थे। इनके सम्मान में सब लोग इनके आज्ञाकारी थे।

शासन—वैदिक काल में समूचा भारतवर्ष छोटे छोटे राज्यों में विभक्त था। प्रजा को राज्य में बहुत अधिकार प्राप्त थे। सब विशेष समर्थों पर सभा विशेषों में प्रजा की सम्मति ली जाती थी। बड़े बड़े विद्वान् आकर उन सभाओं में व्याख्यान देते थे। इन सभाओं में बोलने के लिए वक्ता होना एक बड़ा गुण माना जाता था। इस लिए राजा लोग भी इस गुण के लिए अभ्यास करते थे। राम और कृष्ण में वक्ता-शक्ति अलौकिक थी। प्रजा को अप्रसन्न करके कोई राजा राज्य नहीं कर सकता था।

वैदिक धर्म—आर्य लोग वेदों के धर्म को मानते थे। वेदों का धर्म उच्च सरल, और बड़ा पवित्र है। एक ईश्वर की पूजा सर्वत्र पाई जाती है। हाँ कई लोग देवता के रूप में भी ईश्वर की पूजा करते थे। वे अपने मृतकों को जलाते थे। उनका पुनर्जन्म में विश्वास था। दान उनके धर्म का एक प्रधान अङ्ग था। पाँच महायज्ञों पर बड़ा बल दिया जाता था। बालक गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करने थे। ऋषियों और ब्राह्मणों का बड़ा मान था।

आर्थिक और सामाजिक दशा—ब्राह्मण को धन की आवश्यकता नहीं थी पर आवश्यकता पड़ने पर राजा और धनवान लोग उनके सब काम पूरे कर देते थे। क्षत्रिय और राजा लोग धन-वस्तु में दयावान् थे। अनेक राज्यों ने अपने यज्ञों में अग्नितोता दान किया। वैश्य लोग मृगश्राव और परदेश में वणिज करके धन का बटवारा करते थे। किसानों को जपन के लिये भूमि पर राजा का अधिकार था। उनके जल-धन का आवश्यकता के अनुसार दान मिल जाता था। इस प्रकार सब धन-वस्तु धन-वस्तु के धन-वस्तु करने थे।

चोरी का अभाव था। स्त्रियों का स्थान यद्यपि नर में था, पर था बड़ा ऊँचा। प्रायः नर और नारियाँ गाम्भीर्य पहनते थे। उनके वस्त्र बड़े सुन्दर होते थे। आर्यों के नर बड़े स्वच्छ और शोभायुक्त होते थे। उन में नृप का जाना आवश्यक समझा जाता था। राज-प्रासादों का सौन्दर्य तो असाधारण था। आर्य-विद्या के रत्नक पुरोहितों का बड़ा मान था। आर्यों का जीवन था बड़ा सगल। आजकल के समान कुटिलता, कलह और धनाभाव में भी ऐश्वर्य भोगने की उच्छ्रा उन में कदापि नहीं। पूर्ण ऐश्वर्य में रहते हुए भी उन में त्याग-भाव अधिक था। तभी तो अनेक राजा लोग यज्ञों के अंत में बहुधा अपना सारा धन बाँट दिया करते थे।

चौथा अध्याय

राजनीतिक इतिहास का आरम्भ

मनु—मनु प्रथम आर्य राजा था। अयोध्या नगरी उसी की आज्ञा से बनी थी। वह ही सब वर्मशान्त्र का प्रथम निर्माता था। मनु के वंश में अनेक राज-कुलों की उत्पत्ति हुई है। अयोध्या का प्रसिद्ध इक्ष्वाकु वंश मनु के ही उत्तराधिकारियों में से था। इक्ष्वाकुवंश का प्राचीन इतिहास अब भी बहुत मिलता है।

इक्ष्वाकु वंश—महाराज इक्ष्वाकु ने कोसल देश में अपना राज्य स्थापित किया। मुन्ड नगरी अयोध्या का उसने अपनी राजधानी बनाया। वह एक उत्तरी राजा था। भारतीय इतिहास में इक्ष्वाकु का कल ही सर्ववश का नाम से प्रसिद्ध है।

मान्धाता—इक्ष्वाकु की कुल में उसका एक पौटो पश्चात्

मान्धाता नाम का एक दिग्विजयी राजा हुआ। उसने अगार नरुत वृहद्रथ आदि अनेक राजाओं को पराजित किया। पुराणे ग्रन्थों में कहा है कि—'जहाँ से मृत्यु उद्भव होता है और जहाँ जाकर अस्त होता है वह सारा देश युवनाश्व के पुत्र मान्धाता के राज्य में है।'

मरार—मान्धाता के कुछ पीढ़ी पञ्चान अयोध्या की राजधानी पर सगर नामक राजा हुआ। उसकी गिनती भी चक्रवर्ती अर्थात् दिग्विजयी राजाओं में है। इसका बड़ा पुत्र अमनजन था। प्रजा पर अन्याचार करने के कारण वह राज्य का अधिकारी न बन सका। फिर उसके पुत्र अहम्मान को राजतिलक मिला।

भागीरथ, दिलीप और रघु—महागङ्गा भागीरथ ही गंगा नदी को इस नाम से जाना जाता है। पहले वह नदी उत्तरीय पर्वतों में बहती थी। इसी कारण गंगा का नाम भागीरथी है। दिलीप भी बड़े समय और प्रतापी राजा थे। रघु की दिग्विजय तो बहुत प्रसिद्ध है। अङ्गगानिम्बान के दूरवर्ती प्रदेशों को रघु ने अपने आधीन में लीला था। मान्धाता और रघु की विजय में बड़े-बड़े देश भाग सम्मिलित हैं। रघु के प्रसिद्ध अंग्रेजों में से एक है। यह देश पर रघुका बरतलप

दाशरथी नाम—रघु के पाँचवें मन्त्रालय में एक अङ्गगानिम्बान के दूरवर्ती प्रदेशों को रघु ने अपने आधीन में लीला था। मान्धाता और रघु की विजय में बड़े-बड़े देश भाग सम्मिलित हैं। रघु के प्रसिद्ध अंग्रेजों में से एक है। यह देश पर रघुका बरतलप

राम का इतिहास—दिलीप और रघु के कुछ काल पश्चान
 कौसल के अधिपति महाराज दशरथ थे। उनकी तीन रानियाँ थी,
 कौसल्या, कैकेयी और सुमित्रा। इनके चार पुत्र थे। कौसल्या
 के राम, कैकेयी के भरत और सुमित्रा के लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न।
 भारत में विश्वामित्र नाम के अनेक ऋषि हो चुके हैं। महाराज
 दशरथ के काल में भी एक विश्वामित्र थे। वे एक यज्ञ करते थे।
 अनार्य राक्षस उनके यज्ञ का नाश कर देते थे। विश्वामित्र जी ने
 दशरथ से उनके पुत्र राम और लक्ष्मण माँगे ताकि वे उनके यज्ञ
 की रक्षा करें। अनिच्छा होते हुए भी महाराज ने ऋषि का वचन
 शिरोधार्य किया। राम और लक्ष्मण के कारण विश्वामित्र का यज्ञ
 सफल होगया। विश्वामित्र स्वयं एक क्षत्रिय-कुल से थे। वे
 युद्ध-विद्या-विशारद और परम अस्त्रवेत्ता थे। यज्ञ की समाप्ति
 पर उन्होंने राम और लक्ष्मण को अनेक अस्त्र दिए।

उन्हीं दिनों मिथिला के राजा सीरध्वज जनक की पर-
 म्पुत्री कन्या सीता का स्वयंवर था। विश्वामित्र जी राम और
 लक्ष्मण को लेकर जनकपुरी में पहुँचे। सीरध्वज की प्रतिज्ञा थी
 कि जो कोई उसके पास गये हुए शिव वनुष को तांडेगा, वह
 सीता का पति होगा। स्वयंवर स्थल में अनेक क्षत्रिय राज-
 पण्डित व वीर सभ्य हुए। वनुष तो उनमें उठा भी नहीं
 सिकता। राम ने सीता को देखा तो वह अद्वितीय वनुष क्षण भर
 के लिए ललक उठा। सीता ने नयमाला उलट गत में पहना दी
 और राम को ही अपना पति माना। सीता का विधिवत विवाह हो गया।

महाराज दशरथ को यह पता चला कि राम का अपना युवराज
 नाना चाहेगा। सीता का परान्तर्वासन सप्रामेय में उन्होंने
 सीता को वर दिया। अथ कन्या ने उन्हाँ से पूजा करने की

प्रार्थना की। एक वर के उपलब्ध में उसने राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास माँगा और दूसरे में भरत के लिए उतने काल का राज्य। वृद्ध राजा हतबुद्धि होगया। एक ओर पुत्र का प्रियोग था दूसरी ओर वचन। पर था वह शत्रु का धनी। उसने अपना वचन नहीं धारा।

पिता के वचन को पूरा करने के लिए राम वन को चल पड़े। लक्ष्मण और सीता ने भी उनका अनुकरण किया। सीता एक आदर्श नारी थी। उसने अपना धर्म निवाहा और लक्ष्मण ने भी भ्रातृभाव का एक उज्ज्वल प्रमाण दिया। राजा दशरथ पुत्र-वियोग को सहन न कर सके और उनका देहावसान हो गया। भरत इस समय अपने माता के घर थे। वे अयोध्या लौटे तो मय कुट्ट देख मुन कर सन्न हो गए। अपने मन्त्रियों और कुल-पुरोहित बसिष्ठजी के साथ वे राम को लौटा लाने के लिए वन को गए। पर राम कहाँ मानने वाले थे उन्होंने समझा युभा कर भरत को लौटा दिया।

अथा यः स ज्ञान कर राम विवर्तय पर्वणे म न मं ३ सनक
अथियो का मन्मथ करन ज्ञान ३ नन्हे को मन्मथो म नन्हे
म नन्हे करन म नन्हे मन्मथ ३ म नन्हे म नन्हे
मन्मथ नन्हे म नन्हे म नन्हे म नन्हे म नन्हे म नन्हे
को मन्मथ मन्मथ म नन्हे म नन्हे म नन्हे म नन्हे
मन्मथ मन्मथ म नन्हे म नन्हे म नन्हे म नन्हे

[illegible]

पराजित हुए। रावण युद्ध में मारा गया। चौदह वर्ष अब समाप्त हो चुके थे। सीता सहित राम अयोध्या को लौटे।

राम के पुत्र—राम के दो पुत्र थे, लव और कुश। इसी प्रकार लक्ष्मण आदि के भी पुत्र थे। उन सब ने अपने अपने नए राज्य बनाए। राम के अनेक पीढ़ी पश्चात् महाभारत का प्रसिद्ध युद्ध हुआ। उस युद्ध के समय अयोध्या की राजगद्दी पर उसी कुल का वृहद्वल नाम का एक राजा था, जो युद्ध में मारा गया।

पौरव-कुल

नहुष, ययाति और पुरु—मनु से पुरुरवा नामक एक राजा का सम्बन्ध है। उस पुरुरवा के कुल में नहुष और उस का पुत्र ययाति दो प्रसिद्ध राजा हो चुके हैं। पुरु इसी ययाति के पाँच पुत्रों में से एक था। उसके नाम से भारतीय इतिहास में पौरव नाम का एक वंश चला। पहले यह वंश इतना प्रसिद्ध नहीं था पर धीरे-धीरे इसकी प्रसिद्धि बहुत बढ़ गई।

दुःपन्त—पुरु की कुल में ही महाराज दुःपन्त जिन्हें कई लोग दुष्यन्त भी कहते हैं बड़े प्रसिद्ध राजा हुए। उनकी एक धर्मपत्नी सुविराया नाम की शकुन्तला थी। इसी शकुन्तला से उनका एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

भरत—शकुन्तला के पुत्र के नाम से भरत, यह वीर बालक जब लड़ ही बच का था तभी बच के सिंह आदि हिंसक जन्तुओं को डरता था। भरत एक बड़ा राजा हुआ है। उसने अनेक विजय किए। उस सम्राट पर सच बमौस राजा भी कहते हैं। इसने बड़े बड़े राज किए। उसका राज्या का अन्त नहीं था। कई विद्वानों का मत है कि इसी भरत के नाम से इस देश का नाम

भरत-खण्ड या भारत हुआ। पौरव कुल को ही भारत-कुल कहते हैं। गीता आदि ग्रन्थों में अर्जुन आदि को इसी कुल में उत्पन्न होने के कारण से 'भारत' कहा गया है। प्रसिद्ध ग्रन्थ महाभारत के नाम का कारण भी यही है कि वह भारत कुल का इतिहास है।

हस्तिन—भरत के कई पीढ़ी पश्चात् पौरव-कुल में एक राजा हस्तिन हुआ। उसने हस्तिनापुर का प्रसिद्ध नगर बनवाया। तब से हस्तिनापुर ही पौरव लोगों की राजधानी बन गई।

इस वंश में कुरु नाम का भी एक राजा हो चुका है। उसी के कारण इस पौरव वंश को कौरव वंश भी कहते हैं।

शन्तनु—हस्तिन के कुछ पीढ़ी पश्चात् प्रतीप नाम का एक बड़ा धार्मिक राजा हुआ। उसके तीन पुत्र थे, देवापि, वाह्लीक और शन्तनु। देवापि तो त्वचा-रोग के कारण वन को चला गया। उस ने राज्य नहीं लिया। वाह्लीक ने अपने मामा की कुल के साथ सम्बन्ध जोड़ लिया। अब रहा सब से छोटा शन्तनु। उसने राज्य संभाला। गङ्गा नाम की एक स्त्री से उस का पुत्र देवव्रत था। यही देवव्रत पीछे भीष्म नाम से प्रसिद्ध हुआ।

शन्तनु की एक स्त्री था दाशराज की कन्या सत्यवती। सत्यवती से उसके दो पुत्र उत्पन्न हुए चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य। राजा शन्तनु काट चलीस वर्ष राज्य करके काल इस का प्राप्त हुआ।

चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य—चित्राङ्गद का ही अर्थ है चित्र। बुद्ध से मारा गया। विचित्रवीर्य जगरान से स्वतः मारा। इन दोनों के थे दो पुत्र—धृतराष्ट्र और पाण्डु।

धृतराष्ट्र और पाण्डु—धृतराष्ट्र नरहीन था अतः पाण्डु ने सब राज कार्य संभाला। पाण्डु अश्वविद्या में बड़ा योगी था।

अपने पिता के शीघ्र मर जाने से उसके कई राज्य जो अन्य राजाओं ने ले लिए थे, वे सब पाण्डु ने लौटा लिए। पाण्डु की ख्याति दूर दूर तक फैल गई। कुछ ही काल पश्चात् पाण्डु हिमालय के वन प्रदेश को चला गया। वहाँ उसके पाँच पुत्र उत्पन्न हुए। आयुक्रमानुसार उन के नाम—युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव थे। दूसरी ओर धृतराष्ट्र के भी अनेक पुत्र हुए। उनमें से दुर्योधन और दुःशासन बड़े और पराक्रमी थे। पाण्डु जंगल में मर गया। ऋषि लोग उसके पुत्रों को उनकी माता कुन्ती सहित हस्तिनापुर में छोड़ गए। कहते हैं युधिष्ठिर उस समय १६ वर्ष का, भीम १५ का, अर्जुन १४ का और नकुल और सहदेव तेरह तेरह वर्ष के थे। दुर्योधन युधिष्ठिर से कुछ माम छोटा था। आरम्भ से ही दुर्योधन और पांडवों में कलह रहने लग पड़ी।

भगवान् कृष्ण—उन्हीं दिनों मथुरा के समीप व्रज की भूमि में एक और बालक गोप बालकों में पल रहा था। उसका नाम था कृष्ण। बाल्यकाल में ही उसने अश्रुतपूर्व काम किए थे। कुछ बड़ा होकर श्री कृष्ण ने कम का वध किया। श्री कृष्ण और उनके ज्येष्ठ भ्राता बलराम जी ने माद्रीपिनी नाम के आचार्य से वेद और अर्वाविद्या सीखी। श्री कृष्ण यादव कुल के थे। उस समय यदुवंशी लोग बड़े कष्ट में थे। श्री कृष्ण ने उन का सघन्यापित किया और आप राजा न बन कर व वसक नायक ही रहे। नरासन्य उन दिनों मगध के अतर्पि राजा था। उसने अनेक नृत्रिय राजा बन्दी बनाए हुए थे। यह पांडवों का भी शत्रु था। उसी के अस्मरण में वचन के लिए श्री कृष्ण ने यादवों को समुद्र तट वर्ती दार्जिका पुरी में बसा दिया। इस प्रदेश का पुराना नाम आनर्त था।

दुर्योधन हस्तिनापुर में पिता के साथ राजकाज देखने लगा और युधिष्ठिर इन्द्रप्रस्थ नगर का राजा हुआ और उसने अपना ऐश्वर्य खूब बढ़ाया। इसे देख कर दुर्योधन और उसके भाई जलते थे। इन्हीं दिनों अर्जुन और कृष्ण की अटूट मैत्री हो चुकी थी। श्री कृष्ण की गम्भीर नीति के बल से पाण्डव जरासंध को मार चुके थे। युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ बहुत सफल हुआ। उसके आरम्भ में श्री कृष्ण ने स्वयं शिशुपाल को भी मार दिया। दुर्योधन पाण्डवों का ऐश्वर्य सह न सका। गान्धार के राजा अपने मामा शकुनी के कहने से दुर्योधन ने युधिष्ठिर को घृन के लिए निमन्त्रण दिया। उस जुग में युधिष्ठिर राज-पाट हार गया। अब प्रतिज्ञा के अनुसार बारह वर्ष के वनवास और तेरहवें वर्ष के अज्ञात-वास के लिए पाण्डव वनकी ओर चले।

महाभारत का विख्यात युद्ध

तेरह वर्ष समाप्त हो गए। पाण्डवों ने दुर्योधन से अपना राज्य मांगा। पर वह तो नृई की नोक के बराबर भी भाग देना न चाहता था। श्री कृष्ण भी भाई भाई में सन्धि कराने में असफल रहे। अयोध्या के मन्त्र जत्रिय राजाओं ने दुर्योधन और पाण्डवों ने सहमत मांगी और वे सब भी किसी न किसी ओर से इस युद्ध में लड़े। दुर्योधन दल का कौरव मन्त्र हस्तिनापुर में दुर्योधन तक फैल गई। पाण्डव मन्त्र 'वराट प्रदेश के विस्तृत क्षेत्र में' प्रवेश हुई। आयावन के इतिहास में यह युद्ध अपना प्राप ही रूप में है। दुर्योधन की मृत्यु पर यह युद्ध प्रारंभ हो गया था। श्री कृष्ण की नीति और अर्जुन का धारण न छोड़ना मन्त्र वन पाण्डवों का विजय प्राप्त करे। इसी युद्ध के प्रथम दिन भगवान्

उदयन—उसके बहुत काल पश्चान् कौशाम्बी में उदयन राज करता था। इस उदयन की बड़ी कथाएँ प्रसिद्ध हैं। संस्कृत के अनेक नाटक इसी की कथाओं पर बने हैं। पुराने कवियों ने इस राजा का नाम चिरम्थाई कर दिया है। उन दिनों अवन्ति (उज्जयिन) में चण्ड महासेन का राज्य था। वह एक शक्तिशाली राजा था। उसकी कन्या वासवदत्ता के साथ उदयन का विवाह हुआ।

मगध राज्य

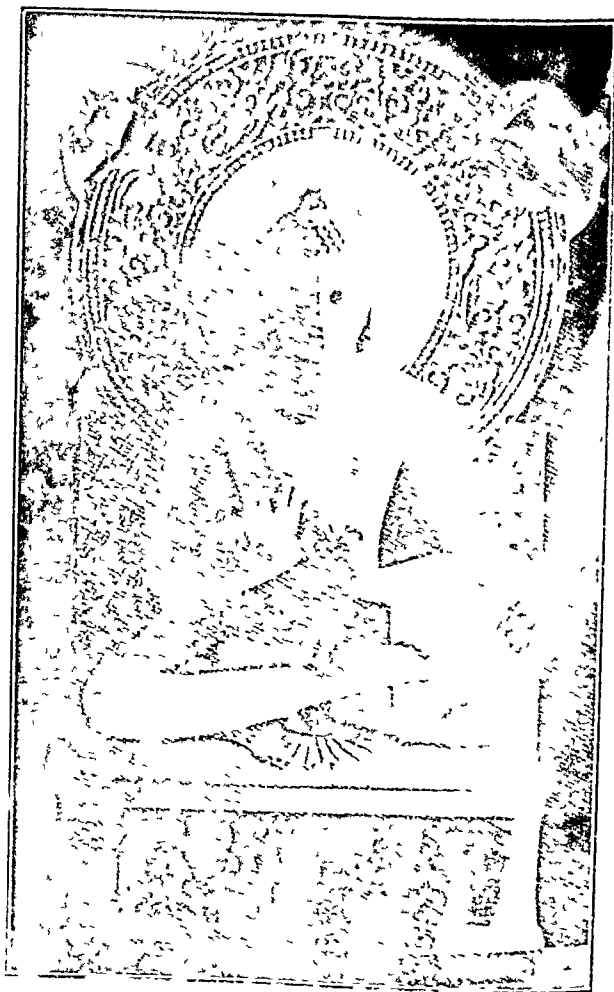
पूर्व लिखा जा चुका है कि भारत-युद्ध काल से कुछ पहले मगध पर जरासन्ध का राज्य था। उसका पुत्र सहदेव भारत-द्वि में पाण्डवों की ओर से लड़ता हुआ मारा गया। भारत-युद्ध से पहले मगध राज्य की बड़ी प्रधानता थी। युद्ध के कुछ काल पश्चात् मगध ने फिर वही प्रधानता प्राप्त कर ली। इस राजवंश में बड़े बड़े प्रभावशाली राजा हो चुके हैं। भारत का अगला इतिहास चिरकाल तक मगध के नाम से ही अविकाश में सम्बन्ध रखता है।

छठा अध्याय

भगवान् पार्श्वनाथ, शाक्य-मुनि बुद्ध

नथा तीर्थंकर महावीर का प्रादुर्भाव

वैदिक धर्म का ह्रास—वही वैदिक धर्म जो कभी बड़ा उदार था, अब सफीर्ण हान लगा। कमकाण्ड और शुष्क तर्क ने आर्य मनो पर अपना गहरा प्रभाव उत्पन्न कर लिया। धर्म की एकता नष्ट हो चली थी। राजा में पशुवध अपनी पराकाष्ठा



खोने लगे। एक रात सोई हुई स्त्री की ओर अन्तिम दृष्टि डाल राजकुमार सिद्धार्थ ने घर त्याग दिया। गृह-त्याग के समय उसकी आयु कोई ३० वर्ष की थी।

घर से निकल कर राजकुमार ने दर्शन-शास्त्र का अध्ययन किया। इस अध्ययन से उसे शान्ति न मिली। छ वर्ष अत्यन्त कठिन तप तथा उपवास किए, परन्तु मनोरथ सिद्ध न हुआ। अन्त को गया में एक वृक्ष के नीचे समाधि लगाई। इसी समाधि के अन्त में उसे प्रकाश मिला। उसको आत्मतत्त्व का बोध हुआ। अब वह वस्तुतः बुद्ध बन गया।

जिस पीपल वृक्ष के नीचे बुद्ध ने समाधि लगाई थी, बौद्ध उसे बाधिवृक्ष कहते हैं और उसका बड़ा मान करते हैं। दूर दूर से बौद्ध लोग अब भी गया के उस स्थान की यात्रा के लिए आते हैं। बुद्ध अपनी शिष्याओं को आर्य-मार्गीय कहते थे। उन्होंने अपना शेष जीवन इन्हीं शिष्याओं के प्रचार में लगाया।

काशी के पास मारनाथ नाम का एक स्थान है। वहाँ पर बौद्धों के पुराने मन्दिरों के भग्नावशेष अब भी दिखाई देते हैं। वही से भगवान् बुद्ध ने अपने बौद्ध धर्म या आर्य मार्ग-वाह आरम्भ किया। वह स्थान भी बौद्धों का एक तीर्थ था। राहु नाम प्रचाराय महात्मा बुद्ध का पर्यटन काशी में सिद्धार्थ के प्रदशा में नहीं हुआ। वे मगध और उसके समीप बड़े-बड़े शहरों में घूमते थे। उन के महस्रो शिष्य बन गए। एक अग्रणी शिष्यवान् हुए वे भिक्षु बन गए। अनेक शिष्यों ने इन भिक्षुओं के लिए बड़े बड़े आश्रम बनाए। उन ने ४५ वर्ष तक अपने धर्म का प्रचार किया। अन्त में उन के अनुयायी हो गए थे।

बुद्ध का उपदेश—बुद्ध परलोक की बातों का उपदेश न करते थे। उनके सामने निर्वाण-प्राप्ति ही जीवन का एक मुख्य आदर्श था। यह निर्वाण सत्य, दया, और आत्मशुद्धि से प्राप्त हो सकता है। अतः इन्हीं बातों पर वे अधिक बल दिया करते थे। भगवान् बुद्ध से यदि कोई दार्शनिक प्रश्न करता भी था, तो वे उसका उत्तर नहीं देते थे। इसीलिए बौद्ध धर्म के प्रागम्भिक काल में जटिल दार्शनिक विचारों का अभाव ही था। लगभग ८१ वर्ष की आयु में बुद्ध ने यह नरवर शरीर त्यागा। उन की मृत्यु ईसा से कोई ५०० वर्ष पूर्व हुई थी।

संघ—अपने भिक्षुओं को बुद्ध ने बौद्ध धर्म के प्रचार का आदेश दिया। इसी निमित्त उन्होंने बौद्ध संघ का निर्माण किया। भिक्षुओं को विशेष कठिन नियमों का पालन करना पड़ता था। पहले तो यह संघ बड़े उच्च आदर्श वाला था और इसके द्वारा बौद्ध धर्म का अच्छा विस्तार हुआ, पर धीरे धीरे इस संघ में अनेक दुरी बाते आ गईं। उन्हीं के कारण आर्यावर्त की भूमि से अन्त में बौद्ध धर्म उठ ही गया।

पूज्य तीर्थंकर महावीर स्वामी—आर्यावर्त के इतिहास में बहुत प्राचीन काल में वैशाली (पटना के उत्तर में वर्तमान बनारस) का एक जत्रिय राज्य रहा है। ईसा से कोई ५५० वर्ष पूर्व यहाँ लिच्छवि जाति का राज्य था। उनके ही उन दिनों एक राजकुमार था। उसका नाम था वर्धमान। कुमार वर्धमान की जिज्ञासा बहुत प्रबल हुई। दुःखमयता में उसका विवाह भी हुआ। पर सामरिक दण्डनों में उसका चित्त नष्ट हो गया। ३० वर्ष की आयु में उसने माँह में डालने वाले सामरिक दण्डन तोड़ दिए। इस त्याग के अनन्तर उसने धीरे-धीरे अपना ज्ञान

किया। पुराने आर्य ऋषियों को छोड़ कर इतनी तपस्या और किसी ने न की होगी। जैनो में तपस्या वैसे भी धर्म का एक प्रधान अङ्ग है। भगवान महावीर ने १३ वर्ष की तपस्या के पश्चात् ज्ञान प्राप्त कर लिया। अब वे यह प्राप्त ज्ञान औरों को देने लगे। वे स्थान स्थान में घूम कर अपने धर्म का उपदेश देते थे। उनका मार्ग जैन-धर्म के नाम से प्रसिद्ध हुआ। महावीर स्वामी लगभग ७२ वर्ष की आयु तक इस मानव कलेवर को धारण किए रहे।

जैन धर्म के सिद्धान्त—जैन धर्म में अहिंसा पर बड़ा बल दिया गया है। धर्म के इस सूक्ष्म तत्त्व को जितना जैनो ने समझा है, उतना अन्य किसी ने नहीं पहचाना। वैदिक धर्म में हिंसा बहुत बढ़ गई थी। जैन तीर्थंकरों ने उसका नाश करके पुन मानवता का प्रचार किया। आत्म-शुद्धि, त्याग और तपश्चर्या पर भी जैनो की असीम श्रद्धा है। सत्य उनके धर्म का मुख्य अङ्ग है। आत्मा को जैन लोग अमर मानते हैं। उस आत्मा की भिन्न भिन्न गतियाँ हैं। उन्नति करती करती वह मोक्ष को प्राप्त कर लेती है। जैन मुनियों का जीवन बहुत ऊँचा और अनुकरणीय है। पहले तो जैनो में भी गम्भीर दार्शनिक विचार के ग्रन्थ नहीं बने, पर उत्तर काल के जैन दार्शनिक ग्रन्थ संसार के साहित्य में बड़ा प्रतिष्ठित स्थान रखते हैं।

बौद्ध और जैन—बौद्ध और जैनो के कई सिद्धान्त परस्पर मिलते हैं। इन के कई सिद्धान्त वैदिक सिद्धान्तों के ही किंचित् परिवर्तित रूप हैं। पर कई सिद्धान्तों में उन का परस्पर मतभेद है। भगवान बुद्ध का कथन है कि उन्होने किसी नए मार्ग का प्रचार नहीं किया। उन से पहले भी अनक बुद्ध हो चुके थे। इसी प्रकार स्वनाम-वन्ध महावीर स्वामी जी भी यही कहते थे कि उन्होने

४—लिच्छवि वंश

इस वंश ने एक प्रजातन्त्र राज्य स्थापित किया हुआ था। इन की राजधानी वैशाली थी। आज कल बिहार प्रान्त का जो मुजफ्फरपुर जिला है, उसी में यह प्रसिद्ध नगर था। इस जाति में बड़े बड़े योद्धा हुए हैं। बुद्ध काल से कई सौ वर्ष पीछे प्रसिद्ध गुप्त वंश की स्थापना में इस जाति का भी बड़ा हाथ था।

५—चण्ड प्रद्योत

भारतवर्ष में उज्जयिनी नामक एक बड़ा पुराना नगर है। अत्यन्त प्राचीन काल से वहाँ कई महान् राज्य रहे हैं। बुद्ध के काल में वहाँ के राजा का नाम चण्ड, अथवा महामेन अथवा प्रद्योत था। उज्जयिनी नगर की शोभा इतिहास में विख्यात रही है।

६—शुद्धोदन

यह बुद्ध का पिता और कपिलवस्तु में रहने वाला था। इन का वंश शाक्य-वंश कहाता है। इस का राज्य भी एक प्रकार का प्रजातन्त्र राज्य ही था।

आठवाँ अध्याय

मगध का नन्द वंश

शैशुनाग वंश के पश्चात् मगध पर नन्द वंश का अधिकार हुआ। इस वंश का आदि पुरुष महानन्दी था। यह छोटी जाति का था। इन के उदय के साथ विगृह्य नात्रयो का हान्न ही होता गया। नन्द वंश ने मूल राज को धोरे न मारकर अपना

रान परे। कई बार तो वे राजा महान का भी विजय
माने थे। गिकन्दर का साम्राज्य बहुत बड़ा था। इस साम्राज्य
में लोग नए नए चीजें बनाते थे। वे भी अपने-अपने कामों में
महान हो चुके थे। गिकन्दर का नाम बहुत सुनाई देता था।
वहाँ से वह समस्त भारत का राजा माना जाता था।
साम्राज्य की शक्ति बढा गया। ऐसा ही 323 वर्ष पूर्व
में गिकन्दर की मृत्यु हो गई। नए राजा आए 32 वर्ष के
ही थे।

गिकन्दर के आक्रमण का प्रभाव—प्राचीन के लोग
प्राचीन में गिकन्दर ने जो अपना राज्य स्थापित किया
उसकी मृत्यु के पश्चात् वह नष्ट हो गया। इसके पश्चात्
लौकिक लोग परे। ऐसा ही कर पश्चात् कर का ही कर
गया। ही पश्चात् कर का ही कर आया। पश्चात्
कर का ही कर पर अधिकार। पश्चात् कर का ही कर

प्राचीन लोग ही कर का ही कर कर का ही कर का ही कर
भारत पर गिकन्दर का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर
ज्ञान विज्ञान का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर
म का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर
म रहा। पश्चात् कर का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर
पर ही कर का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर
ज्ञान विज्ञान का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर
ही। भारत का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर का ही कर
सुप्रसिद्ध रहा है अतः पश्चात् कर का ही कर का ही कर का ही कर
नही पडा।

चन्द्रगुप्त का राज्य—उसमें से ३-३ वर्ष पूर्व सिन्धु में मृत्यु हो गई। उसके सेनापति परमार लाने का ने। पालक प्रनिकांश प्रदेश चन्द्रगुप्त ने अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया था। हिमालय के पारवर्त्य राज्य भी चन्द्रगुप्त ने जीत लिए थे। वज्जाल की गाली तक चन्द्रगुप्त की विजय पताका फहराती थी। उस प्रकार हिमालय से विन्ध्या और वज्जाल से हिन्दूकुश तक का प्रदेश चन्द्रगुप्त की असीमता में था।

महामन्त्री चाणक्य—जिस चाणक्य का अभी कथन किया गया है, उसका दूसरा नाम कौटल्य* अथवा आचार्य विष्णुगुप्त था। चन्द्रगुप्त के महामन्त्री पद की यही नीतिन विष्णुगुप्त विराल काल तक अलङ्घित करता रहा। उस राजनीति का आवतार कहें तो अनुचित न होगा। यह वगैरह जीवों का। आर्यभट्टश्रीमूलक नामक बौद्ध ग्रन्थ में लिखा है कि वह तीन पीढ़ियों तक अर्थात् चन्द्रगुप्त चिद्रमार और अशोक तक उसी पद पर आरुढ़ रहा। उस का न्याय नियम प्रत्यक्ष आर्य बौद्ध, जैन सभी का वह हित था। भगवत् कण्व के अनुसार राजनीति का वही एक अपार पाटन था।

कौटल्य का अर्थशास्त्र—कौटल्य का अर्थशास्त्र समृद्ध वाङ्मय में एक बड़ा महत्व का ग्रन्थ है। महामन्त्री और उसमें भी पहल काल में बड़े बड़े अर्थशास्त्रों का प्रथम ग्रन्थ रहे थे। उनमें से उद्भूत राजा चाणक्य का अर्थशास्त्र और नारद आदि के ग्रन्थ बृहत्काय थे। अर्थात् साहित्य में उन सब का सार प यह ग्रन्थ लिखा। इसमें पटन में साहित्य के सूत्र और व्यापक

* साधारणतया अब तक यह नाम कौटल्य लिखा जाता है, पर गोत्र होने के कारण कौटल्य नाम ही शक है।

जाय कि आज्ञा माँगने वाला व्यक्ति सदाचारी, विद्वान और वैराग्यवान् है, तब ही उसे भिक्षु बनने की आज्ञा मिलती थी। भिक्षु बनने से पूर्व प्रत्येक व्यक्ति को अपनी स्त्री आदि के निर्वाह का प्रबन्ध कर देना पड़ता था। इस नियम के कारण बौद्ध लेखकों ने चाणक्य को अनेक बुरे नामों से स्मरण किया है, क्योंकि हर एक मनुष्य अनायास भिक्षु नहीं बन सकता था।

मैगस्थनीज लिखता है कि आर्य लोग अपने कृषकों का बड़ा ध्यान रखा करते थे। जब क्षत्रिय सैनिक युद्ध कर रहे होते थे, तब उनके समीप ही किसान अपनी खेती करते रहते थे। किसानों को कोई कष्ट नहीं पहुँचाता था। किसानों को सेना में नौकरी नहीं देनी पड़ती थी। इस सुव्यवस्था के कारण भोजन सामग्री का बड़ा आविश्यक था।

रहन-महन—भारतीय लोग सुन्दर आभूषण और सुन्दर वस्त्रों का बड़े पुजारी थे। इस काम के लिए वे चाँदी और सोने का बहुत प्रयोग करते थे। उनकी मलमल बहुत बारीक और फलदार होती थी। वे रंग वस्त्र भी पहनते थे। द्रुपदा उनके वस्त्रों पर सुनहरी काम किया जाता था।

मन्य—भारतीय आय बड़ मन्यवादी और परस्पर विश्वास करने वाले होते थे। वे मुत्तम नहीं करते थे। चारी कहीं दिखाई न देती थी। विपशा लोग पर इस बात का बड़ा प्रभाव पड़ा करता था। लोग पराकांक्षे नहीं लगते थे।

धर्म—आर्य ब्राह्मण और वेदा के अपने अपने मन्दिर थे। आर्य लोग अनेक देवताओं का पूजन करते थे। शिव और वायु की पूजा अधिक थी। ब्रह्मा का शक्तिमान लोका विश्वास रखते थे।

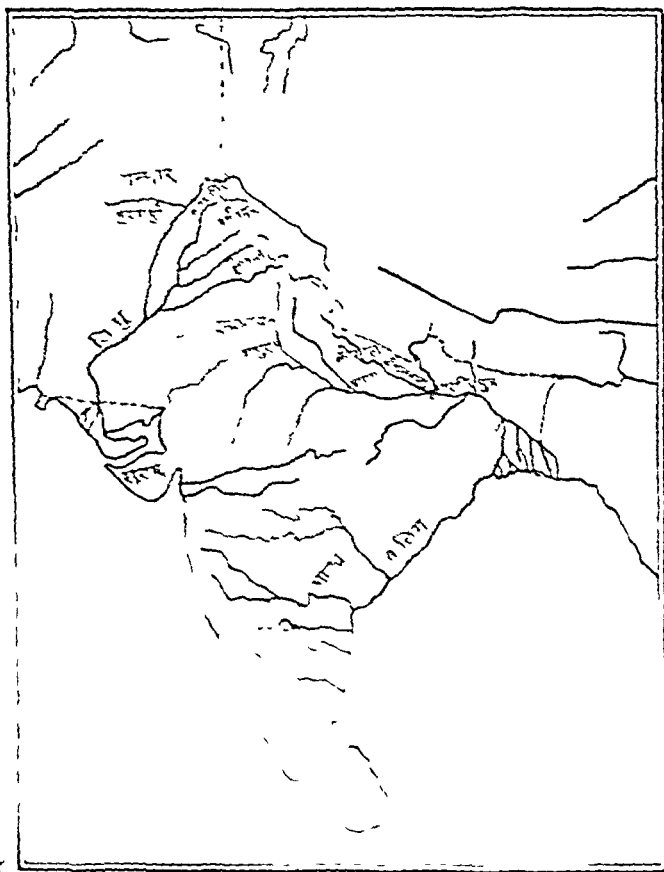


अशोक

चिन्दुसार की मृत्यु के पश्चात् मन्त्री-मण्डल ने अशोक को शीघ्र ही पाटलिपुत्र में लाना लिया। अथ अशोक भारत की सम्राट् बना। तनूशिला और उषासिनी के पश्यन् में अशोक ने जो अपनता कौशल दिखाया था वही अथ उस ने सारे राज्य के प्रबन्ध में दिखाना आरम्भ किया।

अशोक का राज्याभिषेक—अशोक राजा तो बन चुका था, पर उस के विभिन्न अभिषिक्त होने के सम्बन्ध में आपुनिक लेखकों के दो मत हैं। कई विद्वानों का कहना है कि अशोक का राज्याभिषेक चिन्दुसार की मृत्यु के लगभग चार वर्ष पश्चात् हुआ और दूसरे विद्वान कहते हैं कि अशोक का राज्याभिषेक उसके पिता की मृत्यु के कुछ दिन पश्चात् ही हो गया। अशोक के राजपाने के विषय में अनेक विद्वान कहते हैं कि वह अपने ६६ भाइयों का वध करके सम्राट् बना था पर इसमें कहते हैं कि ऐसा नहीं हुआ। अशोक के कई विद्वानों का मत है कि उस के भाई उस के राज-काल में भी विद्यमान थे।

कलिङ्ग-विजय—अशोक का राज-काल लगभग चार वर्ष हो चुका था। अनेक कल का राजा माना जाता है कि उसने कलिङ्ग नाम का प्रदेश जीता। उस समय भारत काल में और उससे पूर्व भी यह प्रदेश अपनी एक पाक बना करता था। इसका राजा बड़े शक्तिशाली था। चन्द्रगुप्त और चिन्दुसार के काल में भी कलिङ्ग ने अपनी स्वतन्त्रता फिर रखी थी। पर अथ मौर्य साम्राज्य के मन्त्री मण्डल का यह बात खत खत करती थी। अशोक के सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात् मौर्य राज्य में भारी सैनिक



2 2

से वीर अर्जुन के हृदय में विषाद प्रविष्ट हुआ था, उस प्रकार कलिङ्ग के अस्माधारण नर-संहार के पश्चात् अशोक का हृदय परमाहत हुआ। अर्जुन को भगवान् कृष्ण ने सँभाल लिया था तथा अर्जुन कर्तव्यमात्र कर रहा था। शुभ कर्तव्य के लिए नर-संहार रुकावट नहीं, श्रेय है। पर अशोक ने केवल साम्राज्य के लिए ही लाखों लोगों की इश्लोक यात्रा समाप्त कर दी। उसे विषाद हुआ, जिसमें पश्चात्ताप की मात्रा अधिक थी। उसके पास कोई कृष्ण नहीं था। सम्भवतः चाणक्य भी काल का प्राप्त बन चुका था। अतः अशोक की मानसिक प्रवृत्ति बौद्ध आचार्यों के प्रभाव से बौद्ध-वैराग्य की ओर झुकी। ऐसी प्रवृत्ति ने चिरकाल के लिए क्षात्र-धर्म के तेज को मंद कर दिया।

अशोक ने दक्षिण के गेहे सहे छोटे राज्यों का नाश बंद कर दिया। उसने उन पर आक्रमण नहीं किए। यदि अशोक एक बार भी सकल्प कर नेता तो वह नकुल के समान यारूप तक दिग्विजय कर आता। पाण्डव नकुल मैन्सियन सागर तक पहुँच आया था। अशोक मिस्रन्दर में बैठकर अपना सैनिक प्रभाव डाल सकता था। पर अब अशोक का मन और प्रकार का हो गया था। समारम कदाचिन् ही फाड़ राता होगा। तबसे इस प्रकार अपना राष्ट्रकाण्ड बढ़ा रहा। ब्रह्माण्ड वातवाग जनको को भी कई युद्ध करने पड़े परन्तु अशोक ने तो युद्ध का त्याग कर दिया, सबका योग कर दिया। यह बौद्ध प्रभाव का फल था। इसमें एक ही बात मिलायी कि अशोक ने अपने राज्य के प्रबन्ध में शिथिलता नहीं आने दी। सम्भवतः उसका मन्त्रीमण्डल इस प्रबन्ध के करने में बड़ा बन गया। उसी मण्डल के कारण मौर्य राज्य-नीति में कोई परिवर्तन नष्ट होने पाया।

धर्म विजय—जात्र-विजय को छोड़ कर अशोक ने धर्म-विजय का पथ पकड़ा। नृत्य, द्रव्य, दान, अहिंसा त्याग और कानलता आदि को ही वह धर्म समझता था। ये ऐसी बातें हैं, जो हर एक के लिए लाभकारी हैं। बौद्ध हो या जैन, वैदिक हो या नास्तिक सभी धर्म और मत वालों का इन से सम्बन्ध पड़ता है। स्वयं बौद्ध मतानुयायी हो कर भी सम्राट् अशोक ने एक सरल धर्म का प्रचार किया।

कलिङ्ग ध्वजय के एक दश नवा वर्ष पश्चात् अशोक ने पूर्ण रूप से बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया। उनके लगभग २६ वर्ष पश्चात् उसने अपना पहला धर्म शिलालेख की। उनमें बत रहता है कि बौद्ध धर्म की शक्ति से ही वह इन धर्म मार्ग का अनुसरण करने लगा है। धर्म विजय के लिए अशोक ने विभिन्न योजनाएँ की। उनमें से कतिपय नीचे लिखी जाती हैं।

१. बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिये अशोक ने एक विभाग स्थापित किया जिसका नाम धर्ममित्राणाम् आचार्योपनिषत्तुः रिति नाम्ना स्थापितम् था।

२. अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २६ वर्ष पश्चात् धर्म विजय के लिये एक शिलालेख की।

३. अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २६ वर्ष पश्चात् धर्म विजय के लिये एक शिलालेख की।

४. अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २६ वर्ष पश्चात् धर्म विजय के लिये एक शिलालेख की।

५. अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २६ वर्ष पश्चात् धर्म विजय के लिये एक शिलालेख की।

६. अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २६ वर्ष पश्चात् धर्म विजय के लिये एक शिलालेख की।

७. अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २६ वर्ष पश्चात् धर्म विजय के लिये एक शिलालेख की।

८. अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २६ वर्ष पश्चात् धर्म विजय के लिये एक शिलालेख की।

९. अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २६ वर्ष पश्चात् धर्म विजय के लिये एक शिलालेख की।

१०. अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २६ वर्ष पश्चात् धर्म विजय के लिये एक शिलालेख की।

‘अशोक’ नाम मिलता है और शेष मन्त्र में महाराज ‘प्रियदर्शी’ लिखा है।

शिलालेखों के अनिश्चित अशोक ने जितने थमे खुदवाए वे सब अत्यन्त सुन्दर और चुनार के पत्थर के हैं। चुनार में दूर देशों में वे कैसे भेजे गए, यह भी एक आश्चर्य की बात है। और पहाड़ों के बीच में खैबर घाटी के आगे अशोक की प्रसिद्ध दीवार आज भी ‘अफिर कोट’ के नाम से पृथ्वी जाती है।

इन शिलालेखों की लिपि—भारत की प्राचीन लिपि पढ़ने का श्रेय विदेशी विद्वानों को है। उन्होंने अपने बहुमूल्य जीवनों के अपने-परे वर्ग लगा कर ये लिपियाँ पढ़ीं। इनमें पढ़ते इन लिपियों के सम्बन्ध में लोग बहुतों को भ्रम करते थे। वे कहे कि लिपियों में है सत्यता और सत्यता ही के लिये वे सब खराबी लिपि पढ़ते हैं। भारत की इतनी बड़ी इतनी बड़ी लिपियाँ इतनी सुन्दर

स्वर और आवाज

दीने का तात्पर्य

उसका एक बड़ा कारण अशोक था। अपने विशाल राज्य के संचालन के अनुभवों का उसने धर्म-प्रचार में प्रयोग किया।

अशोक के राज्य में शिक्षा का प्रचार—अशोक के राज्य में शिक्षा का बड़ा विस्तार प्रतीत होता है। शिलालेख बताते हैं कि उन्हें प्रजा का पर्याप्त भाग पढ़ सकता था। बौद्ध-विहारों में बड़े-बड़े आचार्य शिक्षा देते थे। यह शिक्षा आर्यों के शिक्षा आदर्श के अनुसार बिना फीस दी जाती थी।

अशोक का शासन—अशोक का शासन मुद्दह परन्तु दयापूर्ण था। वह एक शिलालेख द्वारा कहता है—“चाहे मैं खाता होऊँ, चाहे अन्त पुर में होऊँ, चाहे शयनागार में, मैं प्रजा का कष्ट हर समय सुनूँगा। मेरा कोई नौकर उस कष्ट को मेरे तक पहुँचाने में देर न करे।” अशोक फिर कहता है—“छोटे राजाओं को मुझ से डरना नहीं चाहिए। मैं उन्हें कष्ट न दूँगा।” ये भाव थे जो उनके अनुसार अशोक राज्य करता था। एक कालिङ्ग-विजय ने उसे कितना दयालु बना दिया था।

अशोक का अन्तिम समय—यम में लगा हुआ अशोक दिन प्रतिदिन अधिकारीय बन कर रहता था। एक बार जब वह पत्नी दान करने लगा तब मन्त्रा परिषद ने उसे रोक दिया। मन्त्रिण अशोक ने अमान्या स पुत्रा — सैन्य एवं पृथिवी का स्वामी है? मन्त्रा वाक्य— दैव भाग्य क अधिपति है।’ अशुपूर्ण नेत्रों से अशोक ने फिर कहा — क्या आप असमर्थ कहते हैं? हम राज्य में अष्ट दश वृक्ष ।’ यमा समय यमना भनुमय का सूचित कर दिया कि राजा अब अपना शक्ति से वाचन हो गया।

अशोक अन्त में एक अश्रु रागा था। वह प्रजा के प्रतिनिधियों की अवहेलना नहीं करने चाहता था। उधर मन्त्री-मण्डल

ने कई युद्ध किए। उसका राज्य गारुल या म्यालकोट से लेख वङ्गाल के समुद्र तक और दक्षिण में नर्मदा नदी तक फैला हुआ था। उसने लगभग ३६ वर्ष तक राज्य किया।

अश्वमेध यज्ञ—पुण्यमित्र आर्य-सम्राट् था। वह वेद और आर्य सस्कृति का परम पोषक था। अर्जुन के पड़पोते महागज-जनमेजय के पश्चात् उसी ने भारत में दो बार अश्वमेध यज्ञ किया। उसका यज्ञीय घोड़ा सिन्ध के किनारे पर आ निकला उसे ग्रीक या यवन लोगों ने रोक लिया। घोड़े की रक्षा के काम पुण्यमित्र के पोते कुमार वसुमित्र के सुपुर्दे था। उसने घोड़े को सप्राप्त करके यवनो को परास्त किया और अपने घोड़े को लुटाया। इस काल तक पुण्यमित्र का साम्राज्य सिन्ध तक पहुँच गया होगा।

आचार्य पतञ्जलि—प्रातः स्मरणीय भगवान् पाणिनि मुनि ने संस्कृत का एक अनुपम व्याकरण रचा है। ससार भर के विद्वानों का मत है कि किसी भी भाषा का ऐसा व्याकरण नहीं बन सका। मञ्जु-श्री-मूलकल्प में लिखा है कि महाराज नन्द का एक मन्त्री वररुचि था। उसी का एक मित्र ब्राह्मण पाणिनि था। इस कारण जायसवाल का मत है कि व्याकरण पाणिनि नन्द के काल में हुआ। दूसरे विद्वान कहते हैं कि पाणिनि का काल नन्दों से बहुत पहले का है। उन पाणिनि मुनि के छोटे आकार के ८० पृष्ठ के ग्रन्थ पर पतञ्जलि ने २००० पृष्ठ का व्याकरण महाभाष्य नामक एक अमूल्य टीका-ग्रन्थ रचा। पतञ्जलि इस महाभाष्य में लिखता है—“इमं पुण्यमित्रं यज्ञं करा रहे है” अर्थात् पुण्यमित्र के यज्ञ में पतञ्जलि सह विद्वान् पुरोहित का काम कर रहा था।

कलिङ्ग-सम्राट् खार्वेल—जब मौर्य-साम्राज्य निर्बल हो रहा था, तब कलिङ्ग में फिर एक राज-सत्ता फिर उठा रही थी। महाभारत और उस में पहले कालों में चंडि नाम का एक प्रसिद्ध राजवंश चला आ रहा था। उसी राजवंश में कलिङ्ग का राजा खार्वेल हुआ। उस का एक बड़ा लम्बा शिलालेख अब भी मिलता है। उड़ीसा में भुवनेश्वर के पास हाथी गुफा नाम की एक गुफा है। खार्वेल का शिलालेख उसी गुफा में एक चट्टान पर खुदा हुआ है। भाषा उस की है प्राकृत। उस शिलालेख पर खार्वेल के जीवन की मुख्य मुख्य घटनाएँ लिखी हुई हैं।

खार्वेल की विजय—यह राजा जैन था। उस समय उड्डाणा या कलिङ्ग में जैन लोग बहुत फैल गए थे। शिलालेख में पता लगता है कि खार्वेल ने बड़े प्रयत्न किए। तत्पश्चात् २५ वर्ष की आयु में उस का महाराज्यभिषेक हुआ। इस न किञ्चित् दूर तक जाकर वह अपने स्वर्णमय सिंहासन पर बैठा।

मौर्यन पर यवन आक्रमण ३२५-३२३ ई.पू.

३२५ ई.पू. में अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

३२३ ई.पू. में अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

३२३ ई.पू. में अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

३२३ ई.पू. में अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

३२३ ई.पू. में अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

३२३ ई.पू. में अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

३२३ ई.पू. में अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

३२३ ई.पू. में अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

३२३ ई.पू. में अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

अशोक के पिता सम्राट् अशोक ने मौर्य साम्राज्य का विस्तार किया।

दण्डनीति में एक शिथिलता आ रही थी। इसी शिथिलता मौर्य साम्राज्य का अन्त किया। अत्याचार बढ़ गया था, ढोंग वृद्धि पर था। अब एक ब्राह्मण राजा सिंहासन पर बैठा। उसका आदर्श मनु, महाभारत, और गीता थे। उसने उनके अनुसार कठोर दण्ड में देश में पुनः एकाधिपत्य स्थापित किया। बौद्ध लेखक पुण्यमित्र को गोमिमुख्य नाम से पुकारते हैं। वे कहते हैं कि उसने बहुत से बौद्ध मन्दिर नष्ट करवाए, और इसीलिए वह उक्त में अपने अनेक अफसरो सहित किसी पर्वत के गिरने से मर गया।

अग्निमित्र—पुण्यमित्र के पश्चात् उसका पुत्र अग्निमित्र राजा का स्वामी हुआ। इस का राज्य सात या आठ वर्ष ही रहा। प्रतीत होता है कि कविकुल-गुरु कालिदास के मालविका-अग्निमित्र नाटक का यही अग्निमित्र नायक था। अग्निमित्र के अनन्तर शुग वंश के आठ और राजा हुए, परन्तु उन की कोई विशेष बात अभी तक नहीं जानी गई। शुगो ने लगभग १०० वर्ष तक राज्य किया। अन्तिम शुग राजा देवभूमि को उस के प्रपौत्रनामात्य वसुदेव ने मार कर स्वयं राज्य ले लिया। ✓

काण्ववंश—शुगो के समान काण्व लोग भी ब्राह्मण थे। ये यजुर्वेद के पढ़ने वाले और पक्के वेदिक थे। यजुर्वेद की काण्व शाखा पढ़ने में ही उन्हें काण्व या काण्वायन कहा जाता है। काण्व वंश के चार राजाओं ने काण्ड ४५ वर्ष राज्य किया। ४६ राजा नार्मिक थे और उन के सामान्त उन के आगे भुके रहते थे। मुशर्मा काण्ववंश का अन्तिम राजा था।

मातवाहन या आन्ध्र वंश—चन्द्रगुप्त का उल्लेख करते हुए आन्ध्रों का वर्णन किया गया है। माय राज्य के विध्वंस के समय आन्ध्र पुनः प्रबल होन लगे। नार्मिक उस के चारों ओर

चल रहा है। दूसरी मूर्तियाँ टूटी हुई मिली हैं, परन्तु उन का विषय विवाद में परे हैं। वे निश्चय ही सातवाहनो के देवकुल की हैं। वं देवकुल सहाद्रि के नाना घाट में था।

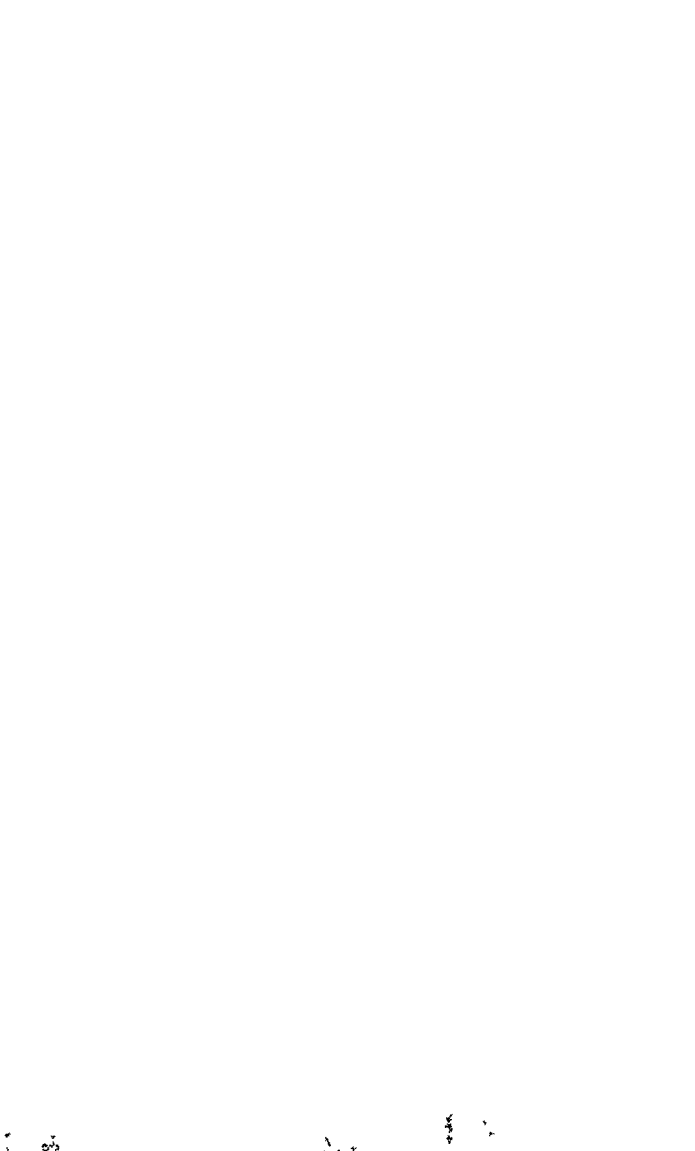
आन्ध्र राज्य का विस्तार—आन्ध्र राज्य का विस्तार खूब हुआ। समुद्री व्यापार से इन को बड़ी आय होती थी। एक ओर रोम तक और दूसरी ओर मलाया तक इन का व्यापार फैला हुआ था। जब मगध पर काएव वश का अन्तिम राजा मुशर्मा राज्य करता था, तब एक सातवाहन राजा ने ही उत्तरीय भारत पर चढ़ाई की थी। उसने मुशर्मा को परास्त कर के काएव वश का अन्त कर दिया।

इस वश का अभी तक विस्तृत वृत्तान्त नहीं मिला। पुराणों की कृपा से इस वश के सब राजाओं के नाम तो मुरजित रहे हैं।

ग्यारहवाँ अध्याय

विदेशीय आक्रमण

सिक्न्दर क लोट जान क पश्चान् चन्द्रगुप्त ने पश्चिमात्तर भारत को अपने राज्य में मिला लिया। मौर्य राज्य क पूर्वाध में किसी विदेशी का उत्तर पश्चिम क भाग में भारत में आने का साहस नहीं हुआ। परन्तु मौर्य राज्य क शायिल हान ही अनेक विदेशी जातियों ने उत्तर पश्चिमीय भाग में भारत पर आक्रमण आरम्भ किए। ये जातियाँ थी—यवन, पाथर्व (पाथियन), शक और कुशन। इन्होंने अपने आक्रमण में कुछ सफलता प्राप्त की और पञ्जाब आदि में इन्होंने अपने राज्य भी स्थापित किए। यवन और



मार्थव जानियों के तो हिन्दुकुश पर्वत से पश्चिम से अपने राज्य थे, परन्तु शक और कुशन दो ऐसी जातियाँ थी, जिनका कि अपना कोई स्थिर राज्य नहीं था।

यवन आक्रमण—दिमित—यवन राजाओं के अनेक सिक्के मज्जाव से मिले हैं। उन से यवन-राजाओं का बहुत सा इतिहास ज्ञात हुआ है। यवनों का दिमित नाम का एक राजा था। उसने भारत पर आक्रमण करके शाकल या स्यालकोट को ले लिया। स्यालकोट पुराने मद्र-राज की राजधानी थी। पाण्डवों का मामा शल्य इस देश का राजा था, माद्री उसी की बहन थी। इसी शाकल ने दिमित या दिमेव्र जम गया। दिमित ने राजगृह तक आक्रमण किया। पाण्डवों ने अपने आठवें वर्ष से राजगृह में ही उसका मुकाबिला किया। खारवेल से हार कर दिमित मथुरा को भाग गया। यवनों ने मध्यमिका नगर पर भी आक्रमण किया। यह मध्यमिका राज-पुनाना में चिन्नौड में है, मील उत्तर-पूर्व एक नगरी थी। दिमित के आक्रमण लगभग इसा स १८० वर्ष पूर्व हुए थे। पतञ्जलि के मतानुसार मइन आक्रमणों की आरम्भ कर दिया गया है। दिमित का राज्य अफगानिस्तान से उरु से नदी तक फैला गया था।

खारवेल के शिलालेख से यह निश्चित जाना है कि खारवेल वातकी और दिमित समकालीन थे।

मनन्द = मिलिन्द—यह यवनों का दूसरा प्रसिद्ध राजा था। इस का बौद्ध ग्रन्थों में बड़ा वर्णन मिलता है। बौद्ध इसे मिलिन्द नाम से लिखते हैं। इस के सिक्के पर मिन्दा का समवर्णन हुआ है। यह अपने का नामक अर्थान् बौद्ध कहता था। उसने गुजरात और चिन्नौड तक विजय की। यह प्रजा जनो का इतना प्रिय बन गया कि इस की मृत्यु पर उसकी प्रजा इसका राज्य को



होती। इसके दरबार में भी याजुष चरक-शाखा का पढ़ने वाला एक चरक वैद्य था, परन्तु चरक सहिना का ससर्तक उससे पहले हो चुका था। तद्वशिला के विश्व-विद्यालय की कनिष्क बड़ी सहायता करता था। इसके राज्यकाल में उसकी दशा बड़ी अच्छी थी। वह सब वर्गों का आदर करता था।

कला-प्रेम—वास्तु-कला से कनिष्क का बड़ा प्रेम था। उसने और उसके राजकर्मचारियों ने कई अत्यन्त सुन्दर मन्दिर बनवाए। उसके काल की बनी हुई बुद्ध-मूर्तियाँ भी सुन्दर हैं। कनिष्क कसौती का सिक्का भी चलता था।

मृत्यु—वृद्धावस्था में कनिष्क ने चीन पर आक्रमण करने का विचार किया। जब वह इस काम के लिए जा रहा था, तब मार्ग में वह एक मन्त्री के हाथ से मारा गया।

उत्तराधिकारी—कनिष्क के दो पुत्र थे—वाशिष्क और हुविष्क। वाशिष्क का पूरा पता नहीं लगता। गद्दी पर हुविष्क बैठा। वह भी अपने पिता के समान विद्याप्रेमी और सब धर्म के विद्वानों का आदर करने वाला था। मथुरा में उसने एक सुन्दर विहार निर्माण कराया। काश्मीर में उसने हुविष्कतर नाम का एक नगर बसाया। चीनी यात्री ह्वान च्वाङ्ग अपनी काश्मीर यात्रा के समय उसी नगर के विहार में ठहरा था।

वामुदेव—हर्षवर्धन के पश्चात् वामुदेव राजा बना। वह जैन धर्म का अनुयायी था। उसके सिक्कों पर शिव और नान्दी की प्रति हैं।

कुशन राज्य का पतन—वामुदेव अपने पिता और पितामह के समान शक्तिशाली नहीं रहा। अकगानिम्नान और मध्य एशिया में हो गए। एक महामारी भी वामुदेव के साम्राज्य में फैल

पड़ी। प्रजा दुर्गयी होने लगी। मध्यभारत के प्रदेश भी स्वतन्त्र होने लगे। फिर भी वासुदेव के उत्तराधिकारी पञ्चाव में ईसा की तीसरी शताब्दी तक राज्य करते रहे। उस समय गुप्त-वंश का तेज बढ़ने लगा था। उसी तेज से तब यह वंश परास्त हो गया।

वारहवीं अध्याय

ब्राह्मण साम्राज्य का पुनरुद्धार

नाग वंश=भारशिव वंश—जिस समय बौद्धमतवलम्बी कुशन शक्ति क्षीण हो रही थी, उसी समय विदिशा और कौशाम्बी के समीप भारत के मध्य में एक नया ब्राह्मण राजवंश उन्नति प्राप्त कर रहा था। इस वंश के लोग पक्षे शैव थे, अतः उनके नाम के साथ शिव शब्द लगा रहता है। भारशिव का अभिप्राय भी शिव के उपासकों से हा है। ये लोग अपने आप को अन्त में वाकाटक भी कहने लग पड़े थे। इस वंश के कुछ एक राजाओं के नामों में पीछे नाग शब्द जुड़ा है और इनके नामों पर नाग (=साप) की मूर्ति पाई जाती है। अतः पुराणों में इस वंश को नागवंश लिखा गया है। इस नागवंश का महाभारत कालीन नागों में कोई सम्बन्ध था या नहीं यह अभी अस्पष्ट है। नागवंश में भारशिव प्रधान थे और कई गण राज्य भी उनके अन्तर्गत थे मथुरा और पद्मावती में उनके कन्द थे।

भारशिव राजा—जिस समय कुशन शक्ति अभी पश्चिम में थी उसी समय भारशिवों का उदय हो गया था। उनका पहला राजा जेपनाग था और उसके पश्चात् छ मात और साधारण

तेरहवाँ अध्याय

गुप्त साम्राज्य

नागवश की शक्ति पर्याप्त थी, पर अत्यधिक न थी। कुशन और सातवाहन राजाओं के पश्चात् भारत में कई क्षत्रिय जातियों ने अपने छोटे-छोटे राज्य पुनः स्थापित कर लिए थे। इन में से शिवि, मालव, चौधेय और लिच्छवि विशेष स्मरणीय हैं। ये सारे गण राज्य थे—अर्थात् इन में राजा चुना जाता था। यह थी उत्तरीय भारत की दशा। दक्षिण में भी अवस्था कुछ कुछ ऐसी ही थी।

सन् ३१९ ईस्वी—इस सन में भारत में एक नए राज-वश का प्रादुर्भाव हुआ। यह वश गुप्त नाम से प्रसिद्ध है। गुप्त-वंशीय लोग भी क्षत्रिय थे। जिस वैदिक धर्म का जीर्णोद्धार शुंगों, काण्वों, और सातवाहनो ने किया था, तथा जिस के उद्धार के लिए भारशिवों ने अपनी मारी शक्त व्यय की थी उसी की रक्षा के लिए अब भारत में एक नई राज्य शक्ति का उत्थान हुआ।

चन्द्रगुप्त—इस वश का पहला प्रसिद्ध राजा चन्द्रगुप्त है। उस के पूर्वज माघराज क्षत्रिय थे परन्तु वह पशव्य का इन्डुक था। सन् ३१५-२८ में राजसिंहासन पर बैठ कर उस ने अपना सम्बन्ध चलाया। यह सम्बन्ध भारतीय इतिहास में गुप्त सम्बन्ध के नाम से प्रसिद्ध है। इस राजा ने अपना ज्ञान का सिक्का भी चलाया। शिला-लेखों में उस महाराजाधिराज का

गया है। लिच्छवि-वंश की एक राजकुमारी से विवाह कर के उस ने अपना बल बहुत बढ़ा लिया। वह वीर जाति उस की सहायक हो गई। उन्हीं की सहायता से उस ने अपने आसपास के कई छोटे राज्यों को अपने राज्य में मिला लिया। बढ़ते बढ़ते उस का राज्य प्रयाग तक जा पहुँचा। चन्द्रगुप्त ने सम्वत् चलाने के पश्चात् लगभग १० वर्ष तक राज्य किया।

समुद्रगुप्त—सन ३३० के समीप समुद्रगुप्त राजा बना। उस का एक प्रसिद्ध शिला-लेख प्रयाग के दुर्ग में एक स्तम्भ पर खुदा हुआ है, उस लेख से पता लगता है कि वह बड़ा विजयी राजा था। उस ने सम्राट् की उपाधि धारण की थी। अनेक युद्धों में लड़ने से उस के शरीर पर कई घाव पड़ गए थे। इसी लिए कई पाश्चात्य ऐतिहासिक उसे भारतीय नेपोलियन कहते हैं। समुद्रगुप्त ने पहले उत्तरीय भारत पर विजय आरम्भ की। जो राजा उस के अत्यधिक विरोधी थे, उनका उसने समूल नाश किया और उन के प्रदेशों को अपने राज्य में मिला लिया। पहले युद्ध में उस ने पाटलिपुत्र नगर जीता और तत्पश्चात् उत्तर भारत के कई अन्य स्थान जीतता हुआ वह काश्मीर तक जा पहुँचा। फिर वह मध्य-भारत की जङ्गली जातियों की ओर बढ़ा। ये जातियाँ युद्ध प्रिय थीं। उन को परास्त करने में उसका पर्याप्त समय लगा। उन पर विजय प्राप्त कर के वह दक्षिण कोमल के राजा महेंद्रपाल से जा लड़ा। उस जीत कर वह उड़ीसा के समुद्री तट के साथ साथ दक्षिण की ओर गया। दक्षिण में एक एक करके सब राज्य उस के अधीन हो गये। इस प्रकार वह नीलौर तक पहुँच गया और वहाँ से फिर पाटलिपुत्र की लौटा। दक्षिण के राजाओं को उस ने मारा नहीं प्रत्युत अपना कर दाता बना लिया। उस की शक्ति इतनी बढ़ गई





थी कि कामरूप (अनाम) कुमाऊँ, और मालवा आदि के कई राजाओं ने स्वयं ही उसे कर देना आरम्भ कर दिया और उस में निवृत्ता कर ली।

अश्वमेध यज्ञ—ममृद्रगुप्त जहाँ गया वही उनकी विजय हुई। नौसेना-सम्राट् चन्द्रगुप्त के पञ्चान इतनी ममृद्धि अन्य किसी राजा की नहीं हुई थी। विजय और सम्पत्ति को दृष्टि से वह अश्वमेध का पूरा अधिकारी हो गया था। राजधानी को लौट कर उस ने यज्ञ का पूर्ण प्रदत्त किया। चारों दिशाओं के वैदिक विद्वान् राजधानी में एकत्र हुए। उन की र्जजणा के लिए सम्राट् ने विशेष रूप के सोने के सिक्के बनवाए। उन पर यज्ञ के घोड़े का चित्र था। ये सिक्के उस ने उन राज-सेवकों को भी बाँटे जो भयानक युद्धों में उस के साथी थे। उन के अश्वमेध की बड़ी धूम थी।

[illegible]

महाराष्ट्र राज्य सरकार
मुंबई

समुद्र-द्वीपों पर सुन्दर नगर—
 आग के शिखरों में
 सारे द्वीपों के राजा—

उन द्वीपों में है कि जहाँ भारतीय लोगों का राज्य था । ये द्वीप चम्पा आदि हैं ।

उस समय मसार भर में समुद्रगुप्त के महारा दूसरा योद्धा न था । वह अफगानिस्तान में परे सामानियन राजा को हरा सकता था, परन्तु वह पक्का आर्य था, निरा साम्राज्यवादी नहीं था । वह तो वर्मानुसार विजय कर रहा था । आर्य-धर्मशास्त्र में भारत में परे जाना पाप है, अतः वह वर्मशास्त्र के विरुद्ध नहीं गया । चम्पा आदि द्वीप और अफगानिस्तान तक क प्रदेश भारत में ही थे, अतः उन सब का वह एक-मात्र सम्राट् हो गया ।

संस्कृत विद्या की उन्नति—राजाश्रय के बिना विद्या उन्नति कठिन हो जाती है । कनिष्क के काल में आर्य-शास्त्र का ह्रास हो रहा था । भारशिवो ने उस ह्रास को रोका । न्याय और वैशेषिक शास्त्र के अनेक टीका ग्रन्थ शैवाचार्यों ने उन्हीं दिनों लिखे होंगे । समुद्रगुप्त के काल में वा संस्कृत की उन्नति बहुत बढ़ी । वह स्वयं विद्या और कला का प्रेमी था । संगीत और वीणा का उसे बड़ा प्रेम था । उस के कुछ मिकों पर दिखाया गया है कि वह बैठा हुआ वीणा बजा रहा है ।

चन्द्रगुप्त दूसरा (विक्रमादित्य)—लगभग ४५ वर्ष राज्य कर क सन् २७५ में समुद्रगुप्त परलाक सिवारा । उस का उत्तराधिकारी चन्द्रगुप्त द्वितीय था । कई ग्रन्थों में इस का नाम विक्रमादित्य लिखा है । समुद्रगुप्त के जीवन का आधकाश भाग युद्धों में बीता था । वह प्रजा की ओर यथाचित ध्यान नहीं दे सका था । उस का राज्य सुख का राज्य था । पर चन्द्रगुप्त द्वितीय ने प्रजा का इतना ध्यान किया कि प्रजा-जन उस से अत्यधिक प्रेम करने लग पड़े । वह न्यायाधीश भी पूरा था ।

कई लोगो का मत है कि यही चन्द्रगुप्त (विक्रमादित्य) विक्रम सम्बन् वाला प्रसिद्ध विक्रमादित्य है । इसी के राज-दरबार में कालिदास, वराहमिहिर आदि विद्वान् रहते थे । यह बात सत्य नहीं । गुप्तों का अपना सवन् है और उस सवन् का विक्रम सवन् ने कोई सम्बन्ध नहीं । दूसरे लोगो का मत है कि उज्जयिन का प्रसिद्ध विक्रमादित्य सातवाहन वंश का कोई राजा था । यह बात कुछ अधिक जँचती है । परन्तु इतना तो सत्य है कि गुप्त विक्रम का विक्रम सवन् वाले, विक्रम से कोई सम्बन्ध नहीं ।

फाहियान—कनिष्क के काल से चीन में बौद्ध धर्म का प्रचार हो रहा था । चीन के लोगो की भारत में बड़ी श्रद्धा हो गई थी । अपने धर्म के मूल-तत्वों को जानने के लिए और अपने धार्मिक तीर्थ-स्थानों को देखने के लिए अनेक चीनी भारत आने के लिए लाया गये थे । उन में से अधिक सहासी लोग समय समय पर भारत यात्रा करने रहते थे । फाहियान उन सब में पहला है । उनका यात्रा-विवरण 'याचि-तु-कि' नाम से लिखा था । चीन से चल कर वे भारत के उत्तर-पूर्व में १२ वर्ष तक रहे । उस १२ वर्ष में वे भारत के उत्तर-पूर्व में १२ वर्ष तक रहे । वह घर से चल कर १२ वर्ष तक रहे । उसमें भारत में १२ वर्ष तक रहे । जान लें वह अनेक इस घटना के अनेक

भारत-वर्णन फाहियान ने वर्णन है 'याचि-तु-कि' की अपनी उन्नीसवीं है । उसमें उन्होंने भारत के उत्तर-पूर्व में १२ वर्ष तक रहे । उसमें भारत में १२ वर्ष तक रहे । जान लें वह अनेक इस घटना के अनेक

हैं। भिन्न लोग उन में निवास करते हैं और अपने ग्रन्थों का पठन-पाठन करते रहते हैं। भिन्न-भिन्न मतों में द्वेष नहीं है। भारत के लोग सुखी और धनवान हैं। दान का बड़ा प्रचार है। उसी दान से अनेक आतुरालय चलते हैं। टैक्सों का भार कम है। दण्ड-नियम कड़े नहीं हैं। फाँसी के दण्ड का तो सर्वथा अभाव है। बार-बार के अपराधी का हाथ काट दिया जाता है। साधारण अपराधों के लिए जुर्माना होता है। बाजारों में माँस नहीं बिकता। न कोई शराबी दिखाई देता है, और न शराब की दुकानें। सड़के सुन्दर और आराम वाली हैं। प्रबन्ध इतना अच्छा है कि चोर या डाकुओं का कहीं चिह्न-मात्र भी नहीं पाया जाता। फाहियान का खीचा हुआ भारत का चित्र एक स्वर्गीय युग का पता देता है। चन्द्रगुप्त दूसरे ने लगभग ४० वर्ष राज्य किया।

कुमारगुप्त (महेन्द्रादित्य)—सन् ४१५ में कुमारगुप्त राज्याधिकारी हुआ। गुप्त-साम्राज्य के वैभव को उस ने कम नहीं होने दिया, प्रत्युत कई एक नवीन प्रदेशों को जीत कर उसने एक अश्वमेध यज्ञ किया। उस अवसर पर उसने अपना सोने का सिक्का प्रचलित किया। वे सिक्के अब भी कहीं कहीं मिले हैं। इस के राज्य में पहले तो शान्ति रही, पर जब यह वृद्ध हुआ तब हूणों ने भारत पर भयङ्कर आक्रमण किया।

हूणों का आक्रमण—तिब्बत के एक पुराने ग्रन्थकार ने इस आक्रमण के सम्बन्ध में लिखा है—महाराज महेन्द्रसेन (कुमारगुप्त) का जन्म कौशाम्बी के प्रदेश में हुआ था। उनका एक पुत्र अत्यन्त बाहुबल वाला था। जब वह कुमार बारह वर्ष का हो चुका तो तीन विदेशीय शक्तियों ने महन्द्र के राज्य पर आक्रमण किया। वे

करते थे, जो स्त्री, बाल और वृद्धों को भी मार देते थे ; वही हूण भारत में स्कन्दगुप्त के कारण कुछ देर के लिए दब गए। उनकी बढ़ती हुई बाढ़ का रोक देना स्कन्दगुप्त का एक महान कार्य था।

स्कन्दगुप्त का राज्य कम से कम ४६७ ईस्वी अर्थात् बरह वर्ष तक रहा। इतने वर्षों के उस के सिक्के मिल चुके हैं।

स्कन्दगुप्त के पश्चात्—स्कन्दगुप्त के पश्चात् गुप्त साम्राज्य क्षीण होने लग पड़ा। उस की कई शाखाएँ हो गईं। अनेक शाखाओं में विभक्त होने के कारण राज्य-शक्ति बँट गई। स्कन्दगुप्त का उत्तराधिकारी बुधगुप्त था। वह सन् ४६६ में राज्य कर रहा था। उसी के काल में गुप्त साम्राज्य का ह्वाम आरम्भ हुआ। वह लगभग सन् ५०० तक राज्य करता रहा। उस के पश्चात् सन् ५१० में द्रुमरी वार हूणों ने भारत पर आक्रमण किया, और ग्वालियर तक का प्रदेश उन्होंने ले लिया।

हूण पन्द्रह सोलह वर्ष तक पश्चिमोत्तर भारत में अपना आधिपत्य रख सके। उन का राजा तोरमाण था। हूणों ने शाकल या ग्वालकोट का अपनी राजधानी बनाया हुआ था, और वही से वह सारे भारत में लूट मार का काम करना चाहते थे। तोरमाण का पुत्र मिहिरकुल था। बालादित्य द्रुमरी ने एक बार इस मिहिरकुल को काश्मीर में भगा दिया था।

इस प्रकार गुप्तों की वह शक्ति जो आर्य धर्म के लिए आर्य सभ्यता की रक्षा के लिए उठी थी, जिस ने कुशन राज्य का अन्त कर के भारत को सुख की साँस लेने का समय दिया था जिस ने योंरूप और चीन तक पहुँची हुई अजेय हूण शक्ति का सहार किया था, जिस ने संस्कृत

भाषा का फिर एक चक्र चला दिया था, वही दुर्गन्त शक्ति भारतीय इतिहास के रंगमञ्च पर अपना असाधारण काम कर के प्रशान्त हो गई। यह छठी शताब्दी ईसा का मध्य-काल था

चौदहवाँ अध्याय

यशोधर्मन् और थानेसर के मौखरी या वर्धनकुल

यशोधर्मन् विष्णुवर्धन—यह एक बड़ा प्रतापी राजा था। इसके वंश का कोई निश्चित पता नहीं लगा। जायसवाल का मत है कि इसके नाम के साथ लगी वर्धन उपाधि बताती है कि संभवतः यह हर्षवर्धन का ही कोई पूर्वज हो। उसके दो शिलालेख मिले हैं। मन्दसोर का शिलालेख बड़ा प्रसिद्ध है। संभव है मन्दसोर उसकी राजधानी हो। मन्दसोर का लेख एक विजय-स्तम्भ पर है। उसका आशय यह है कि—जा देव गुप्त राजाओं तथा दूतों के अधिकार में नहीं आए थे इनका भी उसने अपने अधीन किया। ब्रह्मपुत्र नदी से महेंद्रपर्वत (भारत के पूर्वी विभाग के पूर्वी प्रांत) और हिमालय से पश्चिम समुद्र तक के स्वामियों को अपने सामन्त बनाया और राजा मिहिरकुल ने भी जिसने इन्हें सिद्धा क्रिमा के आगे मिल रहे हुए थे उस चक्रण में अपने मस्तक नमाया अथवा उसने हर । यह लेख सन ५२० के समीप का है।

जिस राजा ने इतनी विजय का उस शिलालेख में परमेश्वर और 'राजाविराज लिख' है यशोधर्मन् ने इतने साम्राज्य का निर्माण करके साम्राज्य के भव का नाश नहीं होने दिया और

बहुत दान पुण्य होता था। जिस प्रकार प्राचीन राजा यज्ञों के अन्त में बहुधा अपनी सारी सम्पत्ति दान कर देते थे, उसी प्रकार प्रयाग के मेले में बड़ सारा निजी धन बौद्ध, जैन, और ब्राह्मण तथा अन्य निर्वन लोगों को दे दिया करता था।

य्वानच्चाङ्ग या ह्यूनसांग की भारत-यात्रा—सन् ६३० में यह चीनी-यात्री भारत पहुँचा। वह यहाँ पन्द्रह वर्ष रहा। सन् ६४५ में वह चीन को लौट गया। उसने अपने भारत-भ्रमण का वृत्तान्त एक ग्रन्थ में लिखा है। हर्ष के राज्य के सवन्ध में वह लिखता है—

कन्नौज बड़ा शक्तिशाली नगर है। पाटलिपुत्र का नगर अपना पुराना ऐश्वर्य खो चुका है। हर्ष का राज्य-संचालन बहुत उत्तम है। राज्य का सारा काम हर्ष की देख रेख में होता है। चातुर्मास्य में भी राजा पूरा निरोक्षण करता रहता है। दण्ड-नियम कड़ा है। भयङ्कर अपराधों के बड़े शरीर के अङ्ग काट दिए जाते हैं। भले पुरुषों को मरुर्म्मों के लिए इनाम भी मिलते हैं। दैक्य बहुत कम है। सड़कों पर कड़ी कड़ी चोर और डाकू मिलते हैं, पर साधारण-तया मार्ग सुरक्षित है। हर्ष को फाहियान के काल ऐसी सड़कें नहीं मिलीं। लांग का राज जीवन सरल और स्वच्छ है। माँस बहुत कम खाया जाता है। राजा ने माँस-भक्षण को रोक दिया है। इस आज्ञा का न मानने वाले को कठोर दण्ड दिया जाता है। शिक्षा का बड़ा प्रचार है। कुलीन स्त्रियाँ भी शिक्षित हैं। वे परदा नहीं करती। विद्वान और पण्डित लोग राजाओं से भी अधिक पूजे जाते हैं। सर्ती की प्रथा प्रचलित है। बालविवाह दिखाई नहीं देने। यात्रियों के लिए धर्मशालाएँ पर्याप्त हैं। किसान अपनी उपज का छठा भाग कर कर्म में देते हैं।

नालन्ड का विश्वविद्यालय—इण्डो के दमनशील राज्य के कारण नजशेला का विश्वविद्यालय निर्वलावस्था में आ गया था। अब नालन्ड ही विद्वानों का जमघट स्थान था। नालन्ड में ही हूनभाग ने शिक्षा पाई। उसका गुरु शीलभद्र उस समय अत्यन्त वृद्ध था। शीलभद्र वीतराग और उच्चकोटि का विद्वान् था। वह नालन्ड का आचार्य था। उनका गुरु वर्मपाल युवावस्था में ही मर चुका था। एक बार जब हर्ष ने दरबार लगाया, तो शीलभद्र वहाँ निमन्त्रित किया गया। राजा हर्ष उस भिक्षु के सिर पर छत्र किए स्वयं नंगे पाँव चल रहा था। विद्वानों के प्रति इसी असीम श्रद्धा के कारण उन नम्र विद्या बहुत बढ़ रही थी।

हर्ष-सम्बत्—भारतवर्ष में हर्ष-सम्बत् के नाम से एक संवत् चलता रहा है। वह संवत् इसी राजा हर्ष का संवत् था। इस संवत् का प्रारम्भ हर्ष के राज्याभिषेक के दिन से हुआ था। ६०० वर्ष तक यह संवत् मध्यभारत प्रादि में चलता रहा यह संवत् का पर यही संवत् दिया हुआ है।

बौद्ध धर्म की अवनति—इस का अर्थ समझना हमारे
के समय तक नहीं आता है। धर्म की एक अवस्था
जीवनदाता है। इस अवस्था में धर्म के अर्थ का
कर कारवाया करना। धर्म के अर्थ का अर्थ है धर्म
का हानि हो रहा है। धर्म के अर्थ का अर्थ है धर्म
धर्म के कोटि १०० वर्ष के अर्थ का अर्थ है धर्म
हो गया। लेकिन धर्म का अर्थ का अर्थ है धर्म
इस विषय में उद्धारना भी धर्म के अर्थ का अर्थ है
न्यूरोपासक धर्म धर्म के अर्थ का अर्थ है धर्म

21-2

1

हर्ष की मृत्यु—सन ६४७ में हर्ष की मृत्यु हुई । उस के छोटे पुत्र न था । उस के मन्त्री अरुणाश्व ने कन्नौज का सिंहासन अपने अधिकार में कर लिया । वह बहुत शक्ति-शाली न था अपन राज्य-व्यवस्था स्थिर न रही । हर्षों ने पुन अपने आज्ञाकरण आरम्भ कर दिए । भारत में अनेक छोटे छोटे राज्यों की उत्पत्ति होने लगी । विशाल साम्राज्य का विचार अब स्वप्न हो गया ।

पंद्रहवाँ अध्याय

विशाल भारत

गत अध्यायों में हमने अरुणानिलान का अनेक बार उल्लेख किया है । यह प्रदेश भारत का ही एक अङ्ग माना जाता था । पूर्व में भारतीय सीमा कहाँ तक थी इस का अधिक वर्णन नहीं किया गया । कुछ वर्ष पहले मैं अरुणा जल-प्रवाह के ही नहीं बड़ो इत हास-लेखकों के मतों पर यह कह करन को सीमा आसाम में बङ्गाल तक ही थी अब यह खतरा संभव पनट गया है कम्बो दिया जावे समस्त आदि अनेक देशों में स्मृत के शिलालेख मिले हैं । चीनी यात्री मा लिगने ने कि इन देशों में भारतीय राज्य ही था । गुजरात मद्रास और बङ्गाल आदि में समय समय पर बहुत स लोग बहा गए महाभारत का २ प्रश्न में भी इन द्वीपों को भारतीय ही माना गया है अतः उन के मान्यता इतिहास दिए बिना इतिहास का लिखना अपराध हो रहता है इन द्वीपों में अब भी कहीं कहीं हिन्दू धर्म का प्रचार है ।

अपने देश को लौटते समय यहाँ भी ठहरा था। उस ने लिखा है कि यहाँ के लोग बहुत समृद्ध हैं और वे हिन्दू धर्म को मानते हैं। नानवी शताब्दी में दशौं जैनेन्द्र नाम के एक राजवंश का उदय हुआ। वह दश बौद्ध धर्म का अनुयायी बन गया। और उसने बौद्ध धर्म के प्रचार में बड़ा भाग लिया। जैनेन्द्र राजाओं ने यवद्वीप में अनेक मन्दिर और स्तूप बनवाए। उन में से बोरो-वन्तर नाम का स्तूप अपनी कारीगरी के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध हुआ है। इस की कला के विषय में विश्रय किया जाता है। यह नमार के अत्यन्त सुन्दर और प्रागल्भ्य स्तूपों में से एक है। इन द्वीपों में इस समय सुमनमान का उदय है। जवाय्य जकल डच लोगों के अधीन है।

सुमात्रा का प्राचीन नाम सुमात्रा द्वीप है। यह भी विजय नाम का एक द्वीप है। कि—सुवर्णद्वीप का नाम सुवर्णद्वीप है। यह द्वीप तक चलने है। यह द्वीप बौद्ध धर्म के साथ सम्बन्धित है।

बोर्नियो—यवद्वीप का नाम बोर्नियो है। यह भी विजय नाम का एक द्वीप है। यह द्वीपों में से यहाँ के समुद्र में शताब्दी के समीप का एक द्वीप है। इसका नाम मूलवर्मा है। हिन्दू थे।

लङ्का और बर्मा—लङ्का और बर्मा भी हैं। बौद्ध धर्म के विरुद्ध से भारत का उदय है।

कन्नौज के प्रतिहार—एक के पतन कन्नौज की उन्नति नष्ट नहीं हुई। उसका ऐश्वर्य धनाढ्य। उनके विशाल भवन और बाजार आकर्षण करनेवाले रहे। उनके राजा भारतीय राजाओं में बड़े मान्य थे।

सन ७५८ के सर्माप कन्नौज का राज्य गधुवशी प्रतिहारों के हाथ में चला गया। उनका पहला राजा नागभट था। उसके जग में चौथा राजा वत्सराज था।

वत्सराज—इस राजा की विजय गौट और चङ्गल तक हुई। जब उसने मालवे के राजा पर चढ़ाई की, तब मालवराज की सहायता के लिए राष्ट्रकूट ध्रुवराज आ गया। वहाँ इसे हार हुई और यह मल्लेख (मारवाड़) को लौट आया। यह राजा गैव था। इसी के राजकाल में सन ७८३ में दिगम्बर जैन आचार्य जिनसप्त न द्विविंश पुराण लिखा।

भोज—(८४० ई०) वह भगवन्त का उपासक था और अपने शिलाजय पर बरह का मान प्रत्यक्त था। इसने उत्तर कन्नौज का भा अरन राज्य में मिल लिया। इसका राज्य उत्तर भारत में एक-एक फैल गया। सुवरन में इसका राज्य की सीमा जलन्तर तक थी। इसका बड़े के पन्द्रहवा राज नेपाल या राज्यपाल था। सन १०१८ में महम्मद गजनवी ने उस पर आक्रमण किया था।

गुजरा—इस समय गुजरात में गुजरात में पहिले लत में अपना निवास करत थे परन्तु पहिले इनके कट बडर पथ इन्ही राजाओं के अधीन हान में माराष्ट्र के पुराने देश गुजरात नाम से बोला जान लगा। इसी की सन्तर्वा आरुषी और नौवीं शताब्दिवा में इनका अरुद्ध प्रभुत्व रहा। राजपूताना में

2

के कारण वे देशद्रोही बन गए। देवल के मार्ग में एक विशाल मन्दिर था। मुहम्मद कासिम ने मन्दिर को तोड़ दिया और १७ वर्ष से अधिक आयु के समस्त ब्राह्मणों को मार डाला, बालक तथा युवतियाँ कैद की गईं। केवल वृद्धा स्त्रियाँ छोड़ दी गईं। अब कासिम दाहिर के दुर्ग की ओर बढ़ा। दो देशद्रोही लोभी बौद्धों ने दुर्ग के गुप्त-मार्ग तथा रहस्य कासिम को बताया दिए। जब राजा को विश्वास हो गया कि अब बाहर निकलने बिना काम नहीं चलेगा, तो राजा ५०००० राजपूत, सिन्धी और मुसलमान योद्धाओं (जो उस की सेवा में आ चुके थे) के साथ आगे बढ़ा। मुसलमान अपने मोर्चों से न निकलते थे। राजा ने बाधा बोल दिया। अरब पिछड़ रहे थे, इसी समय सहसा राजा को तीर आ लगा। उस ने साहस नहीं त्यागा वीर क्षत्रिय आगे बढ़ता गया और रणक्षेत्र में ही मर गया।

दाहिर की रानी वीर क्षत्राणी थी। अपने पति का आत्मग्रहण करके उसने युद्ध जारी रखा। अन्त में रानी की सेना ने पाम का अन्न समाप्त होने लगा। हिन्दू-स्त्रियों ने अन्तिम आग जलाई और चिताओं में प्रवेश करके जल गईं। अपने सैनिकों सहित रानी रणक्षेत्र में उतरी और वही वीरगति का प्राप्त हुई।

मुसलमानों ने मिन्य में आगे राजपूताने की ओर बढ़ना चाहा, पर राजपूतों की वीरता के कारण वे उधर न बढ़ सके और कुछ काल के लिए मिन्य में ही पड़े रहे।

मत्रह्वाँ अध्याय दक्षिण के राज्य

ऊपर और नीचे की दृष्टि में दक्षिण दो भागों में विभक्त हो गया था। नर्मदा से दक्षिण में तुङ्गभद्रा नदी तक ऊपर का और मालावार तक शीर प्रदेश नीचे का भाग था। हर्ष के पश्चात् भारतीय साम्राज्य के नष्ट होने ही दक्षिण के दोनों भागों के अनेक राजा स्वतन्त्र हो गए। उन्होंने अपने अपने राज्यों को बूट भी बना लिया। उन में से कुछ एक ऊपर के दक्षिण के प्रधान राज्य निम्नलिखित थे—

चालुक्य राज्य—आधुनिक बीजापुर जिले में वातापि (=वाशिम) नामक एक नगर था। सन् ४५० के समीप वह एक राजपूत वंश के अधीन में चला गया। इस वंश के आदि पुरुष पुलकेश प्रथम थे। पुलकेश ने कई युद्धों में विजय प्राप्त की और अश्वमेध यज्ञ का भी उसका योग्य पुलकेश दूसरा। सन् ६०८ (६८९) बड़े से जमाया। इसी पुलकेश ने हर्षवर्धन की दक्षिण की ओर बढ़ते लश्कर को रोक रखा था। वह लक्ष्मण स्वयं वार था और एक वीर सैन्य रक्षक था। परन्तु कुछ अभिमानी। उसने अपने राज्य में विद्या का बड़ा उत्थान किया। उसका कलम पत्रव्यवस्था भी बड़ी उत्थान कर रहा था। उसका रुद्र कक्षा था। सन् ६२० में पल्लव राजा ने पुलकेश की हराकर उसका राज्य ले लिया। कुछ काल पश्चात् चालुक्य पुनः शक्तिशाली बन और उन्होंने अपना राज्य फिर प्राप्त कर लिया।

चोल राज्य—इस देश का पुराना नाम चोलमण्डल था।

कावेरीमण्डल इसी का अपभ्रंश रूप है। पाण्ड्य लोगों के सहस्र चोल लोग भी परब्रह्म के मार्ग में पश्चिमी देशों के साथ व्यापार करते थे। इन के बड़े बड़े जहाज थे, जो समुद्रों में दूर दूर तक जाते थे। मित्र तरु के व्यापार पर इन लोगों ने अधिकार कर रखा था। इस वंश के महाराज राजरज (सन ६८५—१०१२) ने तमिल, मैसूर और मद्रास तरु का देश जीता था। इस का साम्राज्य अन्तर्गत विस्तृत था। इस वंश के किमी वीर राजा के राज्य में रहकर ही आचार्य वेङ्कट माधव ने लगभग ग्यारहवीं शताब्दी में अपना अष्टवेद का प्रसिद्ध भाष्य रचा था। ये राजा शिव भक्त थे। राजरज चोल का पुत्र राजेन्द्र चोल था। उस ने लगभग सन १०३४ तरु राज्य किया। वह भी एक वीर योद्धा था। अपने देश की स्वतंत्रता की उन्नति के लिए उस ने एक विशाल झील बनवाई। वह अपनी प्रजा को बहुत सुख देता था। पाण्ड्य और चोल राज्यों में सदा युद्ध होते रहते थे। इन युद्धों में दोनों राज्य बहुत जीराण हा गये और अन्त में १३१० ई० में मलिक काफूर ने इन दोनों राज्यों को नष्ट कर दिया।

पल्लव वंश—पल्लव वंश इतिहास में अभी अभी लिखा गया है कभी इस वंश के बड़े राजा थे। इन की राजधानी काञ्ची थी। प्लान्चवङ्ग के राजा थे। वह लिखते हैं कि बौद्ध भिक्षु वंश सहस्र की संख्या में इस नगर के विहारों में रहते हैं। पल्लव राजा भी चालुक्यों से युद्ध करते रहे और अन्त में चालुक्यों के अधीन हो गये। अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ में इस वंश के उन्मूलन हो गया।

रामानुज—तीसरी चौथी शताब्दी में इस नाँव के राजा थे।

सैन्य से राजा पराजित हो जाते थे। इन दिनों अनेक देशों में भी
यह वही स्थिति साम्राज्य में थी, अनेक नगर राज्य में थे। भारत-
युद्ध के समय भी वही स्थिति थी। राजा दोनों पक्षों में से किसी
एक पक्ष के पक्ष में उस युद्ध में लगे। उसने पश्चान् उतिहास
में नन्दों का साम्राज्य प्रविष्ट है। इसी साम्राज्य के भय से सिक-
न्दर अनेक विदेशों में भारत में प्रवेश ही लौटा। नन्दों के पश्चान्
सौराष्ट्र, सातवाहन, भारगव, और गुप्त वंश के सम्राटों ने
भारत में विनाश और शक्तिशाली साम्राज्य स्थिर रखा। इन्हीं
साम्राज्यों के अतुल्य बल के कारण विदेशी लोग बार बार यत्र
रहने पर भी निराला तब पलायन में भी नहीं ठहर सके। हर्ष
वर्धन तक यह परम्परा चलती गई। हर्ष के पश्चान् साम्राज्य का
विचार टीला पड़ने लगा। आठवीं, नौवीं और दसवीं शताब्दी में
यह विचार सर्वथा जीवित हो गया। दसवीं शताब्दी के अन्त में
साम्राज्य के इसी अभाव के कारण विदेशी यहाँ पर सफल हुए।

२. घरेलू युद्ध और मित्र-शक्तियों का अभाव—अनेक
छोटे-छोटे राज्यों के अन्तर्गत ही जन संपन्न युद्ध बहुत बड़े
हो गए थे। पिछले युद्ध में साम्राज्य का गिरावट आकाश में
किस प्रकार परम्परा के रूप में रह गया था। वेम ही आपस में
लड़ने लगे। भारत में अनेक नगर राज्य नन्दों के अन्तर्गत थे।
आक्रमण हुआ तो लड़ने के लिए वेम ही अनेक नगर राज्य
में ही सहायता दी। अनेक विदेशी बड़े नगर राज्य के
लोग आतंक से अपने पर बैठ रहे। सिकन्दर जब भारत
में आया तो आते ही उन नगर राज्यों के अनेक नगर राज्य
अपना मित्र बना लिया। अपना मित्र शक्तियों के बड़े युद्ध
में ही लड़े जाते। सिकन्दर इस रहस्य का जानता था परन्तु

ज्योतिष—गणि और नक्षत्रों का ज्ञान, सूर्य और भूमि वृत्तों का ज्ञान आर्यों को वैदिक काल में ही था। सूर्य का स्थिति के कारण ही है, ऐसा ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है। आने-सूर्य-ग्रहण और चन्द्रग्रहण को आर्य लोग बहुत गौरव से लेते थे।

आर्य भट (पाँचवीं शताब्दी), बराहमिहिर (छठी शताब्दी) भास्कराचार्य (बारहवीं शताब्दी) आदि विद्वान् इस ज्ञान उच्चकोटि के पण्डित हुए हैं।

गणित—गणित के अनेक विभागों में आर्यों की बहुत पहले ही चुम्की थी। एक जर्मन विद्वान ने लिखा है कि प्लेटो गोरम में कई सौ वर्ष पहले आय जानते थे कि समकोण त्रिभुज की लम्बी भुजा (कर्ण) का वर्ग जेप दोनों भुजाओं के वर्गों का तुल्य होता है। आय लोग अपने यज्ञों में ज्यामैत्री की सहायता से अनेक काम करते थे।

अथ शास्त्र—अथ-शास्त्र का वर्णन पहले आ चुका है। विश्व भारत में बहुत प्रचलित था। कोट्ययन के अथ-शास्त्र में पृथक् अनेक आचार्यों ने इस विषय पर अपने ग्रन्थ लिखे थे।

दशम शास्त्र—दशम शास्त्र गिनती में छह है। गौतम, न्यय, शाल्व, कण्व, कश्यप, शाल्व, कपिल का सामान्य पतञ्जलि का दशम शास्त्र वेदान्त का मामासा शास्त्र और कावदान्त शास्त्र। ये शास्त्र समय-समय पर बने थे। कर्क का मूल सामान्य शास्त्र बहुत ही नया है। इन्हीं दशमों के तत्पर आय विद्वान् बीहड़ और तनाम शास्त्र लिखते थे। वेदों के ज्ञानों के तत्पर शास्त्र बहुत प्रचलित थे। यह तत्पर युद्ध भारत में कई स्थानों तक रहा। छह शास्त्रों पर कई भाष्य और टीकाएँ रहीं।

उन ग्रन्थों को पढ़कर आज भी बड़े-बड़े विद्वान आश्चर्यान्वित हो जाते हैं।

स्मृति-ग्रन्थ—वैदिक काल के अन्त में ही धर्मशास्त्र रचे गए थे। परन्तु उन के वर्द्धनमान्तर पीछे से होते गए। उन के आधार पर कई नए श्रौत-वद्ग स्मृति ग्रन्थ बने। मनुस्मृति पहले में ही श्रौतों में है पर इस में अनेक प्रज्ञेय हुए हैं और कई श्लोक निरुक्त भी गए हैं।

कला-कौशल—अब तो कला-कौशल के भी अनेक पुराने ग्रन्थ मिलने लग पड़े हैं। मूर्ति-कला वास्तु-कला और शिल्प की दूसरी शाखाओं पर अनेक ग्रन्थ लिखे गए थे।

नाटक—बहुन पुराने काल में भारत में नाटक खेले और रचे जाते थे। शुद्ध पुष्पमित्र का पुरोहित पतञ्जलि अपने महाभाष्य में लिखता है कि नाटक खेजने वाले कस-बध का नाटक दिखाते हैं। अश्वघोष कालिदास और भवभूति की रचनाएँ मनोर-प्रसिद्ध हो गई हैं।

कथा, कहानी—कथ कहानी के ग्रन्थों का विस्तार भारत में ही हुआ है। मन्त्राचार्य के कथ ग्रन्थ कहा वन। पंचतन्त्र और हितोपदेश नाम के ग्रन्थ हैं। पाचवाँ सदा में इन कथाओं का अनुवाद मौर्य के समय में हो गया था। कथा-संग्रहों में भी कथाओं का एक स्थान है। इन के मूल ग्रन्थों के ग्रन्थ था, जो अब नष्ट हो चुका है।

शिक्षा—आयावत में 'शिक्षा' का बड़ा प्रचार रहा है। उपनिषद् काल का एक राजा कहता है 'मर दश में एक भी अवद्वान नहीं है।' गुरुकुल का प्रचार अन्यायिक था उन्होंने गुरुकुलों और ऋषियों के आश्रमों में विद्यार्थी लोग पढ़ते थे। ब्राह्मण भी

बौद्ध-काल में भी ब्राह्मण लोग अपनी शिक्षा देते रहते थे। राजा लोगों के दरबारों में बड़े बड़े विद्वान रहते थे।

इन सब नास्तिक और शिक्षा के होने हुए भी राजनीतिक निर्धलता के कारण हिन्दू-राज्य के प्राप्ति में चले गए।

दीसवीं अध्याय

राजनी के सुलतानों के आक्रमण

अरबों का उत्कर्ष और पतन—अरब लोगों ने एक ओर जहाँ मिन्य की विजय किया वहाँ दूसरी ओर योरोप में उन्होंने स्वेन तक अपना साम्राज्य फैलाया। स्वेन की बड़ी-बड़ी मसजिदें आज भी बान्तुल्ला का एक अन्धा नमूना हैं। अरबों का यह साम्राज्य देर तक नहीं रह सका। एक ही शताब्दी में उस में निर्धलता आ गई। अरब स्वभाव में ही विलास-प्रिय थे। इतने भारी साम्राज्य को बना कर व पेश्वर्य को सह नहीं सके। भोग-विलास में पड़ कर उन्होंने अपना मही शक्ति को नष्ट कर दिया।

तुर्कों का उदय—तुर्क के मूल स्थान मध्य एशिया के पहले जगता है। अरब के समय में व कुल मन्त्र हुए और उन्होंने उन्नति करने की ठानी। मसजिद और गुम्बरा में एक स्वतन्त्र मुसलमान राज्य स्थापित हो सका। वहाँ का अमीर अबुलमलिक था। उसने तुर्क अलमगीन के युद्ध में का नायब बनाया। अबुलमलिक की मृत्यु पर अलमगीन हा गजनी का स्वतन्त्र सुलतान बन बैठे। अलमगीन के पश्चात् उसका पुत्र इ सहाक ने गजनी का राज्य संभाला। अलमगीन के एक तुर्की

गुलाम था। उसका नाम था सुवुक्तगीन। वह इसहाक का नायब बना। इसहाक की मृत्यु के पश्चात् सन् ६७७ में सुवुक्तगीन गजनी का सुलतान बना।

सुवुक्तगीन का भारत पर आक्रमण—जयपाल से युद्ध— सन् ६७७ में सुलतान सुवुक्तगीन ने भारत पर आक्रमण किया। उस समय लाहौर में भीमपाल का पुत्र जयपाल राज्य करता था। सरहिन्द से लमगान तक और मुलतान से काश्मीर तक जयपाल के राज्य का विस्तार था। महमूद सुवुक्तगीन का पुत्र था। इस आक्रमण में वह अपने पिता के साथ था। लाहौर का राजा भटिण्डा के दुर्ग में रहता था। कुछ देर तक तो राजा अच्छा मुकाबला करता रहा, पर जब उसने देखा कि उसकी सेना की स्थिति अच्छी नहीं, तब उसने सन्धि का प्रस्ताव किया। महमूद सन्धि के विरुद्ध था, परन्तु पिता ने सन्धि कर ली। राजा जयपाल सन्धि की शर्त के अनुसार धन एकत्र करके सुलतान को देने के लिए लाहौर आया। वहाँ ब्राह्मणों ने उसे सन्धि का उल्लङ्घन करने की प्रेरणा की। क्षत्रिय इसके विरुद्ध थे। राजा ने सन्धि तोड़ दी। यह समाचार सुनते ही मुलतान फिर गजनी से निकला।

जयपाल युद्ध के लिए तैयार हुआ। उसने दिल्ली, कन्नौज और कालिंजर के राजाओं को भी अपनी सहायता के लिए बुलाया। यत्र करने पर भी जयपाल की पराजय हुई। उसकी भागती हुई सेना का मुसलमानों ने सिन्धु नदी तक पीछा किया। लूट का बहुत सा माल मुसलमानों के हाथ लगा। सुवुक्तगीन ने सिन्धु नदी तक के प्रदेश पर अपना अधिकार कर लिया। पेशावर में अपना एक प्रतिनिधि छोड़कर मुलतान गजनी को लौट गया।

सुलतान महमूद—पिता की मृत्यु के पश्चात् महमूद गजनी राजमिहसन पर बैठा। उसने सारे अफगानिस्तान पर अपना प्रभुत्व जमाया। मध्य एशिया के सारे मुसलमानी राज्य उससे मैत्री करना चाहते थे। महमूद जान गया था कि भारत के राजा परस्पर लड़ते झगड़ते रहते हैं। उसे भारत के अथाह धन का भी पता लग चुका था। गजनी के साम्राज्य को मालामाल करने के लिए उसने उत्तरीय भारत पर १७ आक्रमण किए।

जयपाल का दूसरा युद्ध—सुलतान मुवुत्तगीन के चले जाने के पश्चात् राजा जयपाल फिर स्वतन्त्र हो गया था। सन् १००१ में महमूद ने उस पर आक्रमण किया। राजा ३० सहस्र पदाति, १२ सहस्र अश्वारोही और ३०० हाथी लेकर पेशावर के पास उससे आ भिड़ा। देव राजा के प्रतिकूल था। महमूद की विजय हुई। लूट का अगणित माल महमूद के हाथ आया। उस लूट के माल में १६ रत्नजटित कंठे भी थे। उनमें से जौहरियों ने एक का मूल्य १८००० सुवर्ण दीनार बताया। राजा जयपाल दो बार हार चुका था। अतः वह जीवन में निराश हो अग्नि में जल कर मर गया।

आनन्दपाल—जयपाल के पश्चात् लाहौर के राजमिहसन पर आनन्दपाल बैठा। सन् १००६ में सुलतान महमूद ने उस पर चढ़ाई की। आनन्दपाल ने उसने स्वतन्त्र के लिये कन्नौज, दिल्ली और अजमेर के राजाओं की सहायता माँगी। आनन्दपाल पेशावर पहुँचा। पेशावर के पास ४० दिन तक दोनों सनातन एक दूसरे के सामने पड़ी रही। युद्ध आरम्भ नहीं हुआ। हिन्दू अपना बटोरी जाती थी। दर दर से हिन्दू महिलाएँ न अपना श्राद्धपूजा देवकर युद्ध के बीच के लिये बन मजदूरी मिलाने लीं। १००० धनुषधरी आग किए। गकमर उनके सम्मुख हुए।

वीरता से लड़े कि मुसलमानों का साहस टूट गया। गक़्तवरो ५००० मुसलमान क्षण भर में काट गिराए। जब आनन्दपान की विजय निश्चित थी, तब एक गोला लगने से उसका हाथ भाग खड़ा हुआ। हिन्दू सेना हताश हो गई। उन्होंने समझा कि राजा ने पीठ दिखा दी है। सेना भी भाग निकली। जीता हुआ रणक्षेत्र हारा गया। महमूद को लूट में बहुत सी सामग्री मिली। लगभग २० सहस्र हिंदू मारे गए।

अब महमूद का साहस बहुत बढ़ गया। हिन्दुओं की थोड़ी सी सैनिक भूल के कारण विजय उसकी रही और वह उन की सम्मिलित शक्ति को परास्त कर सका। महमूद धन के विचार में ही आक्रमण करता था। अतः उसने वे सब स्थान दृष्टिगत कर लिए कि जहाँ से वह धन ले सके।

नगरकोट पर आक्रमण—नगर कोट काङ्गड़े की पहाड़ियों में एक दुर्ग था। यह हिंदुओं का तीर्थ स्थान था। महमूद ने सुना कि काङ्गड़े के मन्दिर में अर्पण धन है। वह अपनी सेना सहित उग्र बढा। उसकी सेना ने काङ्गड़े के समीप का सारा प्रदेश उजाड़ कर दिया और दुर्ग का पर लिया। राजा ने कुछ देर तो युद्ध की तैयारी की, पर अतः महमूद की अधोनता स्वीकार करली। वहाँ से जवाहरगत और चाँदा के दर के दर महमूद गजनी छोले गया।

मथुरा और कन्नौज—मथुरा का महमूद ने शीघ्र ही ले लिया उसका पश्चान वह कन्नौज की ओर बढा। सन १०१८ में वह कन्नौज पहुँचा। राज्यपाल प्रतिहार उस समय कन्नौज की नहीं पर था। राजा पर यह आक्रमण सहसा हुआ था। वह तैयारी न कर सका। प्रवरा कर वह गङ्गा पार चला गया।

सुलतान ने वहाँ के मान दुर्ग नष्ट कर दिए और अनेक लोगों को मरने के बाद इतारा । कन्नौज दुर्ग तरह से लूटा गया हर्षवर्धन की राजधानी कन्नौज अब अपना ऐश्वर्य खोने लगी ।

सोमनाथ पर आक्रमण—महमूद का सोलहवाँ आक्रमण सोमनाथ पर हुआ । वहाँ एक विशाल मन्दिर था । सोमनाथ की स्थिति गुजरात में समुद्र तट पर थी । इस आक्रमण का काल सन् १०२५ है । तौम सहस्र सवारों के साथ महमूद ने गजनी से प्रस्थान किया । पहले वह सुलतान पहुँचा । वहाँ से मरुभूमि में से होता हुआ वह अन्हिलवाड़े पहुँचा । अन्हिलवाड़े में वह आगे बढ़ा । मार्ग में उसने बहुत से लोगों को मारा । वहाँ से चलकर वह देवलवाड़े पहुँचा । यहाँ से सोमनाथ दो पड़ाव दूर था । वहाँ के लोगों का विश्वास था कि सोमनाथ का देवता शत्रु को भगा देगा । वे लोग इसी विश्वास के कारण नगर में भागे नहीं । महमूद ने नगर विजय करके लोगों को कत्ल किया और उनका माल लूट कर वह सोमनाथ की ओर बढ़ा ।

वीरवार के दिन वह सोमनाथ पहुँचा । उसने समुद्र तट पर एक सुदृढ़ दुर्ग देखा । समुद्र की लहर दुर्ग की दीवारों में टकराती थी । पहले हिन्दू लोग दुर्ग की दीवारों पर चढ़ कर बैठते थे । वे कहते थे कि देवता सब शत्रुओं का नष्ट कर देगा । शुक्रवार को सुलतान आक्रमण के लिए आगे बढ़ा । जब वह दुर्ग के निकट पहुँचा तब और देवता ने इस रोकने का कुशल उपाय न किया तब हिन्दू निरपराध मरने लगे । वे एक बार अपनी परी शक्ति न लड़ें महमूद कुछ देर न हो गया । उस को भविष्य सम्बन्ध युक्त दान्दित लग

दूसरे दिन महमूद ने अधिक इन्साह के साथ मुकुट आरम्भ

किया। मन्दिर की रक्षा करने वाले द्वार द्वार देवता के सामने जा कर रोते थे और प्रार्थना करते थे। फिर वह युद्ध पण्डित जाते थे। इस प्रकार वे प्राणान्त तक लड़ते रहे। अन्त में जो थोड़े से बचे, वे नावों द्वारा समुद्र में चले गये। मुसलमानों ने समुद्र में जाकर भी उन्हें मारा।

सोमनाथ के मन्दिर में सीसे से मढ़े हुए सागवान के ५६ स्तम्भ थे। मूर्ति एक अँधेरे कमरे में थी। मूर्ति पाँच हाथ लम्बी थी। इतनी भूमि के बाहर और दो हाथ भूमि के अन्दर थी। महमूद ने उस का एक भाग जलवा दिया और दूसरा भाग वह गजनी ले गया। उस से उसने वहाँ जामे मसजिद की द्वार की एक सीढ़ी बनवाई। मूर्ति के कमरे में रत्नजटित दीपको का प्रकाश रहता था। मूर्ति के समीप सोने के ब्रांसियों पदार्थ थे। इस मन्दिर में २० लाख दीनार में अधिक का माल महमूद के हाथ लगा। पञ्चान महमूद ने अधिक हिन्द वहाँ मारे गए।

महमूद की मृत्यु और उम के पश्वान्—सन १०३० में गजनी में महमूद का दहान्त हुआ। उम के पुत्र-पौत्र परस्पर लड़ भिड़ कर शक्ति हीन होते गये। अन्य देशों के विजय करने की शक्ति उन में नहीं थी। वे तो अपने राज्य की रक्षा में भी असमर्थ होगे। अथाह धनराशि उन की सब शक्तियों को जीण करने के लिए पयात्र थी।

महमूद पक्का मुसलमान था। वह शरवीर भी था। उस राज्य बढ़ाने की इतनी लालसा न थी जितनी बन-महमूद करने की। वह भारतीय लोगों की निबलता को जान गया था और स्वयं युद्ध-विद्या की नीति जानता था। महमूद ने

यह सत्य एशिया के सब भागों में फैल गया था। प्रसिद्ध कवि गिर्यौरी उसी के काल में हुआ है। महमूद के कहने पर उस ने शाहनामा लिखा। कहते हैं कि सुलतान ने प्रतिज्ञा की थी कि शाहनामा के प्रत्येक पद्य के लिए वह सोने की एक अशरफी देगा। जब शाहनामा समाप्त हो गया तो सुलतान ने प्रत्येक पद्य के बदले चाँदी का एक सिक्का गिनवा कर भेज दिया। जब महमूद के दूत धन ले कर वहाँ पहुँचे, तो लोग कवि के मृतक देह को बाहर ले जा रहे थे।

अयुरिहो अलवेस्नी—अलवेस्नी खोवा का रहने वाला था। वह बड़ा बुद्धिमान और दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। महमूद ने उसे कैद कर लिया था। महमूद को भय था कि जब वह भारत में जायगा तो अलवेस्नी उस राज्य में उन्मत्त फेर कर देगा। अतः वह अलवेस्नी को भी अपने साथ भारत ले आया। यहाँ उसने अलवेस्नी को छोड़ दिया। यह विद्वान दस वर्ष तक भारत में रहा। उसने वहाँ संस्कृत विद्या का अध्ययन किया। भारत में जाते हुए संस्कृत के अनन्त ग्रन्थों का अपने साथ गहनों में गया।

अलवेस्नी ने जो कुछ ग्रन्थों को अपने साथ लाया, सब एक सक्कान में रहने लगा। वह प्रति वर्ष एक बार वहाँ इस सक्कान में बाहर निकलता था। वह सोचता था कि अन्तर्दिग्ध करने की। सारा क्या वह अपने प्रत्येक ग्रन्थों को अपने तीनों बड़े-बड़े ग्रन्थों का रचना का हस्तसंस्कृत के सम्बन्ध में है। इस ग्रन्थ में वह 'अनुशासन' का उद्देश्य और वाक्यों का उल्लेख करता है। एक स्थान पर वह कहता है कि मनुष्य के चार वर्गों के विद्वान् ज्ञान में एक अवस्था के द्वारा अपने को नष्ट करते। उसने अठारह पुराणों का मन्त्रों की है। सारा सत्य जो ज्योतिष शास्त्र का वह बहुत उल्लेख करता है।

महमूद के आक्रमणों का भारत पर प्रभाव—पहले लिखा जा चुका है कि महमूद बनसज्जय के लिए ही भारत में आता था। इसलिए उसने यहाँ आकर अपना कोई स्थाई प्रभाव नहीं छोड़ा पर उसके बार-बार के आक्रमणों के कारण, उत्तरीय भारत की सैनिक शक्ति बहुत दुर्बल हो गई। महमूद से पहले भी उत्तरीय भारत में शक्तिशाली कोई एक बड़ा राज्य नहीं था, अब तो रहा-सहा राज्य-बल जाता रहा।

सन ६७७ में तुर्क वंश ने गजनी का राज्य संभाला था। सन १११७ में इस वंश का अन्त हो गया। ११४० वर्ष में इस वंश के कोई वारह शासक हुए। अन्तिम सुलतान बहरामशाह था। अलाउद्दीनहुसैन गोरी ने सन १११७ में गजनी ले लिया। बहराम ११ भाग कर लाहौर आ गया और ११४६ सन में यहाँ ही मरा।

मालवे का परमार भोज—जिन दिनों गजनी का महमूद उत्तरीय भारत पर बार बार आक्रमण कर रहा था, उन्हीं दिनों परमार वंश का भोज नाम का एक प्रसिद्ध राजा मालवे में राज्य करता था। उस की राजधानी धारा नगरी थी। उस का राज्य अच्छा विस्तृत था। आस पास के कई राज्य जीत कर ही उसने अपने राज्य का विस्तार किया था। वह कभी कभी अपने चित्तौड़ के दुर्ग में रहा करता था। भोपाल या भोजपुर का प्रसिद्ध ताल इसी राजा का बनवाया हुआ माना जाता है।

यह राजा स्वयं विद्वान और विद्वानों की बड़ी प्रतिष्ठा करने वाला था। इसी के राज्य में प्रसिद्ध विद्वान उवट ने अपना यजुर्वेद भाष्य रचा था। भोज अथवा उस के नाम से उस के पण्डितों के बनाए हुए बीस-पच्चीस उच्चकोटि के संस्कृत ग्रन्थ अब भी मिलते हैं।

इक्कीसवाँ अध्याय गठौर, चौहान और अफगान

गहरवार या गठौर—राठौरो का पुराना नाम गहरवार है। जब गुर्जर प्रतिहार कन्नौज में निर्दल हो गए, तो चन्द्रदेव नाम के एक राठौर नामन्त ने कन्नौज पर आक्रमण करके इसे अपने अधिकार में ले लिया। शनैः शनैः उसने आस-पास के भी कई नगर अपने राज्य में मिला लिए। उसका कुछ काल पश्चात् गोविन्द चन्द्र राजा हुआ। वह कन्नौज का बड़ा प्रसिद्ध राजा था। उसका पोता जयचन्द्र था। वह ११७० ई० में कन्नौज का राजा बना। राठौर का राज्य सारे सयुक्त प्रान्त और बिहार तक फैला हुआ था। वह जयचन्द्र का जिसके राज्य अफगान राजा महम्मद गौरी ने नष्ट किया।

अजमेर के चौहान—अजमेर में जीव न वंशाय राजपूतों का राज्य था। महम्मद गौरी ने अजमेर को भी जीत लिया। अजमेर की राजधानी। विजयनगर इस बात का बड़ा कारण बन गया। उसने दिल्ली के तोमर-वंश के राजा को हराकर अजमेर को अपने राज्य विलुप्त कर लिया। इस बात का कारण यह था कि अजमेर का राजा कहते हैं उसका एक विद्वान कन्नौज के राजा जयचन्द्र का पुत्र से हुआ था।

दिल्ली के तोमर—कन्नौज पराजित होकर अजमेर में आया। दिल्ली की बड़ी वृद्धि की थी। फिर कई शत विजय तक दिल्ली एक

साधारण नगर रह गया। ग्यारहवीं शताब्दी के आरम्भ में तोमर-वंश का दिल्ली पर राज्य था। सन १०४० में दिल्ली राजा अनन्तपाल ने वर्धा एक दृढ़ दुर्ग बनवाया और यहाँ मन्दिर भी बनवाए। उन्हीं मन्दिरों का तोड़कर ११६० में उनके पत्थरों से कुतुबमीनार बनाई गई थी।

गोर का शहाबुद्दीन—हिरात और गजनी के मध्य में गोर नाम का एक छोटा-सा राज्य था। उसकी राजधानी फोरोज़गंज थी। वहाँ गयाबुद्दीन मुहम्मद नाम का एक राजा था। उसका छोटा भाई शहाबुद्दीन या मुहम्मद गोरी था। जब गजनी की क्षीण हो गया तो शहाबुद्दीन ने गोर से ही भारत पर आक्रमण आरम्भ किए। शहाबुद्दीन ने गजनी का राज्य भी ले लिया। गजनी की धन, सम्पत्ति वह सब लूट ले गया। गजनी के मुन्दर भवनो को उसने धराशायी कर दिया। वह गजनी जिसका सौन्दर्य सारे एशिया में सुविख्यात हो गया था अब एक साधारण नगर रह गया। इसके पश्चान् मुहम्मद गोरी ने मुल्तान पर आक्रमण किया। फिर उसने भटिण्डे का दुर्ग ले लिया।

शहाबुद्दीन और पृथ्वीराज का पहला युद्ध—जब शहाबुद्दीन भटिण्डे के दुर्ग को ले चुका तब अजमेर का चौहान राजा पृथ्वीराज शहाबुद्दीन को रोकने को आगे बढ़ा। उसने कई हिन्दू राजाओं की सहायता प्राप्त की। वह थानेसर के समीप नराइन के पास पहुँचा। वहीं उनका शहाबुद्दीन से युद्ध हुआ। शहाबुद्दीन बुरी तरह घायल हुआ और रणक्षेत्र से भाग गया। लाहौर आकर उसने अपनी चिकित्सा कराई और फिर गजनी चला गया। यह घटना सन ११६१ की है।

इस विजय के पश्चान् पृथ्वीराज ने भटिण्डे के दुर्ग को जा

धेरा। उनका हाकिम जियाउद्दीन १३ मान के पश्चान् परास्त हुआ। मुहम्मद गौरी अपनी पराजय भूला नहीं। अपने घर पर उसने भारी तैयारी की। सन् ११६२ में एक लाख बीस हजार सेना लेकर वह फिर भारत आया। थानेसर के पान् पृथ्वीराज से उस का युद्ध हुआ। पृथ्वीराज हार कर कैद हुआ और मारा गया। इस विजय से मुहम्मदगौरी ने अजमेर तक का प्रदेश अपने राज्य में मिला लिया। पंजाब तो पहले ही मुसलमानों के अधिकार में जा चुका था।

पृथ्वीराज का पुत्र गोविन्दराज था। उसने शहाबुद्दीन की अर्थांतता स्वीकार कर ली। शहाबुद्दीन ने उसे अजमेर की गद्दी पर बिठा दिया। पृथ्वीराज के भाई हरिराज को गोविन्दराज की इस क्रिया पर बड़ा क्रोध आया। उसने गोविन्दराज से अजमेर का राज्य छीन लिया।

कन्नौज पर चढ़ाई—शहाबुद्दीन का तुर्क जाति का एक गुलाम और सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक था। उसने सन् ११९३ में अजमेर वालों से फिर दिल्ली लीन ली। तभी में दिल्ली भारत में मुसलमानों राज्य का राजधानी हुई। हरिराज ने कुतुबुद्दीन से युद्ध किया पर अन्त में उस पराजित होकर पड़ा और इस प्रकार अजमेर भी स्थिर रूप में मुसलमानों राज्य में जा मिले। सन् ११९४ में कुतुबुद्दीन ने कन्नौज पर चढ़ाई की। तभी में दिल्ली भारत में मुहम्मद चल्दावर के युद्ध में पराजित हुआ। इस विजय में अजमेर तक का प्रदेश मुसलमानों अधिकार में आया।

गुजरात पर आक्रमण—इस के पश्चात् सन् ११९५ में कुतुबुद्दीन ने गुजरात पर चढ़ाई की। इस चढ़ाई में उस का मुँह की खानी पड़ी। गुजरात वालों ने मंगो की महारत में उस पर

आक्रमण कर दिया। वह बचकर भागा और अजमेर आ गया। उसने मुहम्मदगोरी को दूत भेजे। मुहम्मद गोरी ने एक बड़ी सेना लेकर गुजरात के राजपूतों को डण्ड देने के लिए निकला। आवू के समीप एक युद्ध में बुरी तरह घायल होकर शहाबुद्दीन लौट गया। अगले वर्ष कुतुबुद्दीन ने फिर गुजरात पर चढ़ाई की और आवू के समीप ही उसने विजय प्राप्त करके गुजरात को लूटा।

सन् १२०३ में कुतुबुद्दीन ने कालिंजर पर चढ़ाई की। वहाँ राजा परिमर्दन बड़ी वीरता में लड़ा। उसने दो सान्त्वये आल्ला और उदल। वे दोनों बड़े वीर थे। उन्होंने घोर युद्ध किया था, पर अन्त में राजा हार गया।

बंगाल-विजय—मुहम्मद गोरी का एक सेनापति मुहम्मद बिन बख्तियार खिलजी था। उसने ११९७ में बिहार पर आक्रमण किया। वहाँ पालवश का राज्य था। वह बश अत्यन्त निबल हो गया था। बिहार में उन दिनों बौद्धमत का कुछ-कुछ प्रचार होता था इसी कारण वहाँ की प्रजा भी हतोत्साह थी। केवल २०० सवारों की सहायता में उसने बिहार पर अधिकार कर लिया। नालन्दा आदि के विश्वविद्यालय इसी प्रान्त में थे वहाँ का बहुमूल्य साहित्य खिलजी के सैनिकों ने लूट-भ्रष्ट कर दिया। जिस प्रकार सिकन्दरिया का समार-प्रसिद्ध पुस्तकालय ग्रीकों ने लूट कर पुराने इतिहास और विज्ञान के लक्ष्य अमूल्य ग्रन्थ जल दिए थे उसी प्रकार बख्तियार ने नालन्दा आदि के पुस्तकालयों को लूट कर के भारतीय सभ्यता के लाज्यों प्रयों को अग्नि की भेंट कर दिया। इन विश्वविद्यालयों में रहने वाले महान् बौद्ध भिक्षु कत्त किए गए।

इस के पश्चात् सन् ११९९ में बालार ने १८ नवंबर लेकर मेत-वश के राजा लक्ष्मण सेन की राजधानी नदिया पर चढ़ाई की। राजा नगर छोड़ गया, मुसलमानों ने नदिया को भरपूर रूढ़। बालार ने गौरी को अपना केंद्र बनाया और वहाँ अनेक मस्जिदें बनवाई।

गौरी की मृत्यु—इस प्रकार बालार उत्तर-भारत मुसलमानों के राज्य में चला गया। राजपूतों की रही-सही शक्ति भी दिन प्रति दिन कम होती गई। गौरी का स्थापित किया हुआ मुसलमानी राज्य भारत में स्थायी होता गया। मुहम्मद गौरी की मृत्यु सन् १२०६ में हुई। कुतुबुद्दीन तब भी भारत में उस का नायब था।

बार्लंबी अध्याय

गुलाम-वंश सन् (१२०६-१२९०)

कुतुबुद्दीन (सन् १२०६-१२९०)—गुलाम-वंश मुहम्मद गौरी की मृत्यु के समय कुतुबुद्दीन भारत में इसका प्रतिनिधि शासक था। वह गुलाम-वंश का एक वीर था। सेनापति के काम में उस की दक्षता की इस थी। अपने स्वामी की मृत्यु के पश्चात् सन् १२०६ कुतुबुद्दीन एक स्वयं भारत का वादशह बन बैठे। वह उदार हृदय और न्याय प्रिय था। उस ने दिल्ली में एक मस्जिद बनवाई। कुतुबुद्दीन का बनावत भी उसी ने करवाने किया था। पर कई ऐतिहासिक कहते हैं कि गुलाम-वंश ने यह मीनार बनवाई थी और कुतुबुद्दीन ने इसे पूरी समाप्ति कर क

अपना नाम दे दिया। कुतुबुद्दीन दूरदर्शी व्यक्ति था। उसने अपनी शक्ति अपने राज्य के दृढ़ करने में लगाई। उस ने गुलाम वंश के कई ऐसे विवाह सम्बन्ध जोड़े कि जिस से यह वंश प्रबल हो गया। सन् १२१० में वह घोड़े से गिर कर मर गया।

शमसुद्दीन अल्तमश (सन् १२११-१२३६)—कुतुबुद्दीन के पुत्र का नाम आरामशाह था। कुतुबुद्दीन के बाद वह गद्दी पर बैठा, पर बहुत दिन राज्य नहीं कर सका। बदायूँ के सूबेदार अल्तमश ने उसे गद्दी से उतार कर स्वयं राज्य ले लिया। उस समय मुसलमानों ने भारत में पृथक्-पृथक् अपने राज्य स्थापित कर लिए थे। ये राज्य थे लाहौर, दिल्ली, सिन्ध और बिहार।

गद्दी पर बैठते ही अल्तमश ने लाहौर के सूबे पर अपना अधिकार कर लिया।

बौद्ध मंगोल चङ्गेजखॉ—उत्तर-पश्चिमी चान में मंगोल नाम की एक जाति रहती थी। मंगोल लोग बौद्ध थे। चङ्गेजखॉ नाम का एक वीर उनमें उत्पन्न हुआ। वह बौद्ध होते हुए भी बड़ा रणरसिक था। उसने मंगोल जाति को संगठित किया और अनेक विजय करके मंगोलों का एक विशाल साम्राज्य बना दिया। योरुप के अनेक भाग उसके राज्य में मिल गए। उत्तरीय चीन और तुर्किस्तान को जीतकर वह शाह जलालुद्दीन का पीछा करता हुआ भारत में आ पहुँचा। उसने अफगानिस्तान को उजाड़ दिया और हिरात तथा पेशावर ले लिए। अफगानिस्तान वालों ने जिस निर्दयता से भारत के कई भाग उजाड़े थे, उससे अधिक क्रूरता से उसने अफगानिस्तान को उजाड़ा। क्या वह बौद्धों पर किए गए अत्याचारों का बदला ले रहा था? शाह जलालुद्दीन भागता भागता दिल्ली आ पहुँचा। यहाँ अल्तमश ने उसे शरण

श्री. पर चंगेज का भय अन्तमश के मन में भी बैठ गया। चंगेज पहले चाहता था कि उत्तरीय भारत में होकर तिब्बत के मार्ग से अपने देश को लौट जाय, पर शीघ्र ही उसके विचार में परिवर्तन आ गया। यदि वह भारत से होकर जाता, तो भारत का भविष्य रुज और हो जाता। उसके लौटने पर अन्तमश ने सन् १२२५ में इज्जत ले लिया। तीन वर्ष पश्चात् सन् १२२८ में उसने सिन्ध भी अपने शासन में सम्मिलित कर लिया।

शौच ही उस ने राजधन्भोर, माँह और ग्वालियर को भी अपने अधीन कर लिया। मैवाड़ पर भी वह बड़े दल बल के साथ चढ़ा, पर वहाँ उस को हार खानी पड़ी। मालवा के राजपूतों को भी उस ने जीत लिया। सन् १२३४ तक नर्मदा तक का प्रदेश उस के राज्य में आगया।

सुलताना रजिया बेगम (सन १२३६-१२४०) — अल्तमश के पुत्रों में बादशाहों के गुण न थे चत अल्तमश की पुत्री रजिया ने भारत पर राज्य करना आग्रह किया। रजिया में अपने पिता के अनेक गुण थे। उस न रूपन पिता के राज्यकाल में ही शासन का अनुभव कर लिया था। वह सरदारों को प्रवृत्त कर करार में बैठती थी और प्रजाजन के अनेक कष्ट करती थी। उस क कष्ट सरदार उस से कुपित रहे। उस क कष्ट रजिया एक भूल कर देता। उस क कष्ट रजिया प्रसिद्ध हो गया। सरदार न 'बुरा' कर रजिया न 'बुरा' कर कुशलता से विद्रोह शान्त कर रजिया न 'बुरा' कर रजिया न 'बुरा' कर लिए उस ने एक तुकी सरदार से विवाह कर लिया। सरदार इस पर भी क्रुद्ध हो गए और रजिया न 'बुरा' कर रजिया न 'बुरा' कर और उस के पति दोनों को कैद कर लिया। कैद न भग हुए थे,

पति-पत्नी जङ्गल में मारे गए । रजिया का राज्यकाल लगभग मात्र तीन वर्ष ही रहा ।

रजिया ही एक ऐसी देवी हुई है जिसे दिल्ली के राजसिंहासन पर बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । पर पुरुषों की अमानुष कठोरता के कारण इतनी योग्य होती हुई भी वह अपनी मानव यात्रा को निर्विघ्न न समाप्त कर सकी ।

नासिरुद्दीन—रजिया के देहान्त के पश्चान् उस के दो भाई वारी वारी से गद्दी पर बैठे, पर वे नितान्त अयोग्य थे । तब सन १२४६ में उस का तीसरा भाई नासिरुद्दीन बादशाह बना । यह बड़ा दयावान और धर्मात्मा था । ऐसे दयावान बादशाह की उस समय आवश्यकता न थी । उस का सारा राज-कार्य उस का गुलाम बलवन करता था । बलवन के ही कौशल से उसका राज्य दृढ़ हो गया । इसी समय मुगलों ने भारत पर आक्रमण आरम्भ किए । बलवन ने सारे सीमा प्रदेश में दुर्ग बनवाए और इन आक्रमणों से भारत की रक्षा की । बलवन ने राजपूतों के भी कई विद्रोह शान्त किए । इतने में सन १२६६ में नासिरुद्दीन परलोक मिथारा ।

बलवन—सन १२६६ में जब मुलतान नासिरुद्दीन का देहान्त हुआ, तब बलवन ६७ वर्ष का था । स्वामी की मृत्यु के पश्चान् उसने राजगद्दी संभाली । वह एक वीर और दूरदर्शी शासक था । योग्य होने के कारण ही वह भारत का सम्राट् बना । भारत, तिब्बत और मध्य एशिया के अनेकों राजा उस से डरते थे । दण्ड देने में वह दया नहीं करता था । अपने शत्रुओं पर उसने कभी कृपा नहीं दिखाई । अपनी सेना को वह सदा नैयार रखता था ।

बङ्गाल-विद्रोह—मुसलमानी राज्य में एक भारी दंग रहा है । मुसलमानी बादशाह अपने मूवेदारों को म्हायी बना देते थे ।

कैकुवाद—बलवन अपने पुत्र बगरागा को बङ्गाल का सरदार बना कर वहाँ भेज चुका था। बगरागा का पुत्र कैकुवाद वही वह आलमी और दुष्ट प्रकृति का पुरुष था। भोग-विनामसिवाय उसे कुछ आता ही न था। बलवन के बाद वह बादशाह बना। उस के समय में गुलाम राज्य में विद्रोह के निद दिगड़ों के लगे। सरदार अपना अपना मन बना रहे थे। बगरागा स्वयं उसे समझाने के लिए बङ्गाल से आया पर वह पिता के उपदेश में पंजाब जा चुका था। ऐसा नीतिहीन बादशाह भला कितने दिग्गज राज्य कर सकता था। खिलजी वंश का जलालुद्दीन नाम का एक सरदार था। उसने कैकुवाद का बंधन कर कर शत्रु को यमुना में बहा दिया। सन् १२६० में कैकुवाद की मृत्यु के साथ ही गुलाम वंश का शासन समाप्त हो गया।

तेईसवाँ अध्याय

खिलजी वंश (१२९०—१३२०)

जलालुद्दीन खिलजी (सन् १२६०—१२९६)—
७० वर्ष की आयु में जलालुद्दीन दिल्ली का मुल्तान बना। वह बड़ा नीतिज्ञ था। उसे पता था कि उसने अपने स्वामी के मरवाया है, अतः बहुत से सरदार उसका विरुद्ध होंगे। सिंहासनाारूढ़ होते ही उसने बहुत सा रुपया सरदारों का बाँटा और अनेक जागीरे भी दी। इस प्रकार उसने सब सरदारों को अपने पक्ष में कर लिया। जलालुद्दीन ने रणथम्भौर पर चढ़ाई की। वहाँ राजपूत मरने मारने को उद्यत थे ही बहुत रक्तपात होता देख क

अलाउद्दीन (मन् १२६६ — १३१५)—जलालुद्दीन के पुत्र अभी तक जीते थे। किन्तु ही सरदारों की मृत वादशाह के पुत्रों से सद्गुणभूति थी। अलाउद्दीन उन सब से डरता था। पर कुछ सरदारों को उसने अपनी ओर कर लिया और वह दिल्ली की ओर चल पड़ा। जलालुद्दीन का एक पुत्र दिल्ली का वादशाह बन बैठा था। अलाउद्दीन ने सरदारों से इतना प्रसन्न कर लिया था कि जलालुद्दीन के पुत्र के साथी बहुत थोड़े रह गए। वह भयभीत हो कर मुलतान को भागा और अलाउद्दीन ने बड़ी सज धज के साथ दिल्ली में प्रवेश किया। शनैः शनैः सारे सरदारों ने अलाउद्दीन को वादशाह मान लिया, और वह सन् १२९६ में दिल्ली की राजगद्दी का स्वामी हो गया।

गुजरात-विजय—सन् १२६७ में अलाउद्दीन ने गुजरात पर आक्रमण किया। अन्हलवाडे के राजा कर्ण के साथ उस का युद्ध हुआ। राजा युद्ध में मारा गया। राणी कमलादेवी कैद हो गई। अलाउद्दीन ने उसे अपने अन्तपुर में रख लिया। इन्हीं दिनों वादशाह की मना में एक गुलाम प्रविष्ट हुआ जो इतिहास में मालिक काफर क नाम से प्रसिद्ध है।

मुगल और दिल्ली—मुगल लोगों ने भारत पर आक्रमण करना बन्द नहीं किया था। सन् १२६८ में मुगल दिल्ली पर चढ़ आये। वादशाह ने दिल्ली के बाहर उन से युद्ध कर के उन्हें परास्त किया। इस के पश्चात् अलाउद्दीन ने अपनी उत्तरीय सीमा पर अनेक दुर्ग निमाण कराए। उसने गाजी तुगलक (गयासुद्दीन) को पञ्जाब के दिपालपुर नगर में अपना नायब बनाया। इस प्रकार के प्रबन्ध से इस के जीवन काल तक तो मुगलों के आक्रमण बन्द हो गए।

मन्त्री भी था। सन १३०६ के लगभग वह दक्षिण की ओर बढ़ा। उस के पास एक बड़ी भारी सेना थी। उस ने पहले राजा कर्ण की पुत्री देवलदेवी को पकड़ा। देवलदेवी बादशाह के पुत्र खिज्रग्या से ब्याही गई। बादशाह उससे पूर्व स्वयं देवगिरि के रामदेव पर चढ़ाई कर चुका था। अब काफूर ने भी उसे जा घेरा। राजा हार गया, पर बादशाह का आविपत्य स्वीकार करने के कारण बादशाह ने उसे अपना कर-दाता बना लिया। कुछ काल पश्चात् रामदेव मर गया। रामदेव के पुत्र ने स्वतन्त्र होने की चेष्टा की, पर वह एक युद्ध में मारा गया। तब से महाराष्ट्र पर भी मुसलमानों का अधिकार हो गया।

इस के पश्चात् काफूर कुमारी अन्तरीप तक बढ़ा। एक के पश्चात् दूसरा हिन्दू राज्य उस ने ले लिया। दक्षिण की ओर बढ़ ले कर काफूर दिल्ली लौटा। उस के साथ हुए धन को देख कर बादशाह विस्मित हुआ और काफूर प्रधान-मन्त्री बनाया गया।

अलाउद्दीन का साम्राज्य—अलाउद्दीन का साम्राज्य मौर्य, गुप्त या आधुनिक ब्रिटिश साम्राज्य के समान मुट्ठे तो नहीं था, पर था पर्याप्त फैला हुआ। उत्तरी भारत में पंजाब का आधा भाग, राजपूताना और सिन्ध उस ने ले लिए थे। पूर्व में वह बङ्गाल तक पहुँच गया था। दक्षिण में मालवा, गुजरात और सुदूर दक्षिण के अनेक भाग उस ने जीत लिए थे। राजनीति के गम्भीर तत्व न तो अलाउद्दीन जानता था, और नाही उस के मन्त्री। इस लिए उस का साम्राज्य स्थायी न था। उस के जीवन काल में ही इस साम्राज्य में शिथिलता आ गई।

शासन-प्रणाली—अलाउद्दीन जहाँ लूट पर पर्याप्त ध्यान

लगभग एक मास पश्चात् मलिक काफूर मारा गया। बादशाह का एक दूसरा पुत्र था, कुतुबुद्दीन मुबारक। उसने अपने भाई को राजसिंहासन से हटा दिया और सन् १३१६ में स्वयं बादशाह बन बैठा। कुतुबुद्दीन अत्यधिक विलासी था। अलाउद्दीन की लूट से सम्पत्ति ने उसे शक्तिहीन कर दिया था। भोग-विलास की लत में पड़ा हुआ बादशाह दिल्ली के अमीरों के घरों पर नाच-रंग देखा करता था।

देवगिरि के राजा से युद्ध—अवसर ताड़ कर देवगिरि का राजा हरपालदेव स्वतन्त्र हो बैठा, परन्तु वह अपनी सेना पूर्ण रूप से तैयार न कर सका था कि बादशाह ने स्वयं उस पर चढ़ाई की और उसे हरा कर मरवा दिया। इस क्षणिक विजय के कारण बादशाह पहले की अपेक्षा और भी अधिक विलासी हो गया। वह नीच-प्रकृति के लोगों से मेल रखता था। ऐसा ही एक व्यक्ति खुसरो था। उसे बादशाह ने मन्त्री बना लिया था। इसी खुसरो ने बादशाह को मार डाला और सिंहासन पर स्वयं बैठ गया।

नासिरुद्दीन खुसरो—खुसरो मुसलमानों पर अत्याचार, कुरान का अपमान और मसजिदों का तिरस्कार करता था। मुसलमान सरदार उस से दुर्खा हो गए। ऐसी अवस्था में पंजाब के दिपालपुर के नायब गयामुद्दीन तुगलक ने खुसरो पर चढ़ाई की। युद्ध में खुसरो मारा गया। तब गयामुद्दीन दिल्ली के राज्य का स्वामी बना।

अलाउद्दीन का बनाया हुआ साम्राज्य पाँच ही वर्ष में अब तुगलक वंश की अधीन हो गया। इस पाँच वर्ष के अन्तर में अनेक राजपूत राजाओं ने अपनी अपनी स्वतन्त्रता फिर स्थिर कर ली।

ज्योतिष, दर्शन आदि सब विषय उसने देखे थे। वह काव्यरमिक और स्वयं एक कवि था। मुल्ला लोगो को राज्य में वह दखत नहीं देने देता था।

पर दोष भी उसमें कम न थे। वह अपनी बात पर बड़ा हठ करता था। जो बात एक बार करना चाहता था, उसे कर के ही छोड़ता था। उसका दण्ड-नियम क्रूरता में भरा हुआ था। विद्वान् होते हुए भी वह राजनीतिक रूप में गहरा देखने वाला नहीं था—अदूरदर्शी था। मन में जो लहर उठती उसे वह कार्य में परिणत करना चाहता था। इस प्रकार उसने कई ऐसी बातें की, जो उसके दुःख का कारण बन गईं। उस को क्रोध भी अधिक आ जाता था, इस लिए उस के समीप रहने वाले उस से बहुत डरा करते थे।

राजधानी का बदलना—बादशाह के प्रारम्भिक वर्ष युद्धों में बीते। उसने अपने साम्राज्य को बहुत बढ़ किया। उस से पहले किसी मुसलमान शासक का राज्य इतना विस्तृत नहीं था। उस के साम्राज्य में २३ सूबे थे। उन में से कुछ प्रधान सूबे दिल्ली, लाहौर, गुजरात, मालवा, कन्नौज और देवगिरि आदि थे।

उसका साम्राज्य सुदूर दक्षिण तक फैला हुआ था। दक्षिण में बहुधा विद्रोह हो जाते थे। बादशाह ने सोचा कि दिल्ली से इतने दूर के प्रदेशों का सँभालना कठिन है। उसने देवगिरि को अपना केन्द्र स्थान बनाना चाहा। एक दृष्टि से तो देवगिरि ऐसा नगर था, जो भारत का केन्द्र बन सकता था। मुहम्मद तुगलक ने आज्ञा की कि उस के राजकुमारी देवगिरि को चले। इस के साथ उसने एक भारी भूल की। उसने अपने समृद्ध नगर-वासियों से कुछ प्रेम सा था। उसी प्रेम में उसने उन को भी आज्ञा दी कि

के बराबर था। बादशाह ने अगली बात नहीं सोची। सहनो पुरुष नकली सिक्के बनाने लग पड़े। व्यापारियों को सन्देह हो गया। व्यापार बन्द होने लगा। अपनी साख बचाने के लिए बादशाह ने आज्ञा की कि ताँबे के सब सिक्के के बदले सोने-चाँदी के सिक्के राजकोष में दे दिए जाएँ। ऐसा होते ही राजकोष खाली हो गया। लोग नकली सिक्कों के बदले में भी सोने चाँदी के सिक्के ले गये। औपच्य उलटी पड़ी। निवृत्ति के स्थान में रोग आगे से भी कहीं बढ़ गया।

राज्य-प्रबन्ध—बादशाह ने हिन्दू प्रजा पर अलाउद्दीन की कठोरता स्थिर रखी। वह भी उन्हें निर्धन करके अपने आधिपत्य में रखना चाहता था। किसानों पर उसने भारी टैक्स लगाए। दूसरे टैक्स भी बहुत बढ़ा दिए।

एक ओर जहाँ अत्याचार की सीमा हो चुकी थी, दूसरी ओर उसने अनेक मदरसे और औपधालय स्थापित कराए। इन में दवाई बिना मूल्य मिलती थी। अपराध करने पर मुल्ला लोगों को भी दण्ड मिलता था। विदेशियों का बादशाह मान करता था। उसके दरबार में चीनी, तुर्की और फारसी विद्वान विद्यमान थे। दुर्भिक्ष के समय बादशाह ने लोगों की पर्याप्त सहायता की थी। कहते हैं उसने सती की प्रथा रोकने का भी यत्न किया था।

विद्रोह—अब बादशाह को अपनी मूलों का फल मिलना आरम्भ होने लगा। उसकी क्रूरता का कारण लोगों के मन अन्दर ही अन्दर जल रहे थे। धीरे धीरे सभी स्थानों पर उसके विरुद्ध विद्रोह आरम्भ हुआ। पहले भावर स्वतन्त्र हुआ। फिर सन् १३३७ में बङ्गाल भी साम्राज्य से निकल

कर उस ने भारत पर आक्रमण करने का निश्चय कर लिया। सन् १३६८ में ७० वर्ष की आयु में वह समरकन्द से चला। मार्ग के नगर और ग्राम उस ने जला दिए। जन-संहार का तो कहना ही क्या है। तैमूर जहाँ से गुजरा, वहाँ कत्ले आम कराता गया। न जाने कितने लाख स्त्री-पुरुष उस ने कत्ल कराए। पञ्जाब की भूमि उस के भय से काँप उठी। दिसम्बर में वह पानीपत पहुँच गया। मार्ग में उस ने एक लाख कैदी बनाए थे। यहाँ उस ने उन सब को कत्ल करा दिया। उसे भय था कि युद्ध के समय ये कैदी शत्रु दल में मिल जायँगे। तैमूर के पास कोई एक लाख के लगभग सेना थी। वह दिल्ली पहुँच गया।

उधर महमूद तुगलक लगभग पचास सहस्र सेना के साथ उस का सामना करने के लिए बाहर निकला। तैमूर को विजय हुई। बादशाह महमूद रणक्षेत्र से भाग गया। तैमूर ने दिल्ली में प्रवेश किया। तीन दिन तक तैमूर के सिपाही दिल्ली को लूटते रहे। लाखों स्त्री-पुरुष कत्ल हुए। दिल्ली की सारी सम्पत्ति तैमूर ने बटोर ली। दिल्ली में मेरठ और वहाँ से हरिद्वार होता हुआ तैमूर समरकन्द को लौट गया।

आक्रमण के पश्चात्—दिल्ली की बादशाहत जो पहले ही अस्त व्यस्त दशा में थी अब सर्वथा जीग हो गई। दिल्ली का वैभव, दिल्ली की पहली सी शान अब कहाँ थी। वन का तो वहाँ नाम भी न था। ऐसी दिल्ली के राज्य का अब कौन मान सकता था ? दिल्ली राज्य की सीमा दिल्ली और आगरा तक ही रह गई थी। तैमूर चला गया। दिल्ली में जो अस्माधारण नर संहार हुआ था, उस की दुःगन्धि के कारण वहाँ भयङ्कर महामारी फैल गई।

2

पर बल देते थे। इन का सम्प्रदाय मथुरा, गुजरात और बम्बई में बहुत फैला।

चैतन्य—चैतन्य महाप्रभु का नाम बङ्गभूमि के वच्चे वच्चे जानते हैं। चैतन्य का जन्म सन् १४८५ में हुआ। चैतन्य भी वैष्णव और कृष्णोपासक थे। जात-पात के वे भी कट्टर विरोधी थे। अनेक नीच जाति के मनुष्य उन के शिष्य बने। उन की कृपा से बंगाल में वैष्णव धर्म का अच्छा प्रचार हुआ।

इन सब धार्मिक गुरुओं ने जात-पात पर पूरा कुल्हाड़ा चलाया और भक्ति-मार्ग का भरपूर उपदेश दिया। जो नीच जाति के लोग धड़ाधड़ मुसलमान हो रहे थे, वे इन के उपदेशों में हिन्दू ही रहे। यही नहीं, इन की असीम भक्ति के प्रभाव से अनेक मुसलमान भी इन के शिष्य हो गए। दूमरी ओर भक्ति-धारा का प्रवाह बहा कर इन्होंने धर्म को सरल कर दिया। कठिन यज्ञ जो मुसलमानों राज्य में असम्भव थे, लोगों को आकर्षित नहीं कर सकते थे। इस लिए भक्ति के मार्ग द्वारा ईश्वर-प्राप्ति का मन्त्र चल गया। हिन्दुओं में अपने धर्म के प्रति श्रद्धा बढ़ी। संस्कृत विद्या का हास तो हुआ, पर हिन्दू धर्म बच गया।

सत्ताईसवाँ अध्याय

मुगल-साम्राज्य

पुराने मंगोल ही मुगल नाम से पुकारे जाते हैं। चंगेजखान के कुछ काल पश्चात् मंगोल लोग मुसलमान हो गए थे। तैमूर भी वंश का था। मुगल साम्राज्य के टूटने पर उस की अनेक

१४८२ में हुआ। सन १५०६ में उस का अभिषेक हुआ। मेवाड़ के महाराणाओं में से वह सब में अधिक प्रतापी हुआ है। वह अपने समय का सब में प्रबल हिन्दू राजा था। महाराणा ने गुजरात के सुलतानों और सुलतान इब्राहीमलोदी से कई युद्ध किए थे। इब्राहीम के साथ उस का युद्ध सन १५१७ में खातोली ग्राम के पास हुआ। बादशाह भाग गया और राजकुमार कैद हो गया। इस युद्ध में महाराणा का बाया हाथ कट गया था और घुटने पर तीर लगने के कारण वह लगडा हो गया था।

महाराणा सांगा और बाबर—बाबर महाराणा के बल को जानता था। इस लिए महाराणा के साथ युद्ध करने से पहले उसने अपनी शक्ति को एकत्र करना ठीक समझा। बाबर ने ग्वालियर आदि कई दुर्ग अपने अधिकार में कर लिए। महाराणा सांगा भी आगे बढ़ा। बाबर स्वयं लिखता है कि महाराणा के वेग का कोई ठिकाना न था। जणभर में वह कहीं का कहीं पहुँच जाता था। महाराणा ने पहले बयाना ले लिया। फरवरी सन १५२७ को बाबर आगरे के पास अपनी सेना एकत्र कर रहा था। आसपास के जल के स्थानों की रक्षा का वह प्रबन्ध कर लेना चाहता था। फरवरी २२ सन १५२७ को बाबर का सेनापति खानवा तक आ पहुँचा। महाराणा ने उस पर आक्रमण कर दिया। बाबर ने भी अपने सेनापति की सहायता के लिए बड़ी सेना भेजी। राजपूतों ने युद्ध जीत लिया। बाबर के कई बड़े बड़े अफसर मारे गये। बाबर अपनी तोपों को भी साथ ला रहा था।

महाराणा की तीव्र गति से मुगल बड़ा घबराते थे। बाबर स्वयं लिखता है—“मेरी सेना के छोटे बड़े सभी भयभीत हो रहे थे।” बाबर बड़ा बेचैन था। उसने अनेक पाप किए थे। उसने सोचा

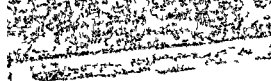
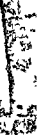
आश्चर्य की बात है कि हुमायूँ अन्ध होने लगा और बाबर का रोग अधिक होता गया। २६ दिसम्बर मन् १५३० को आगरे में बाबर की मृत्यु हुई।

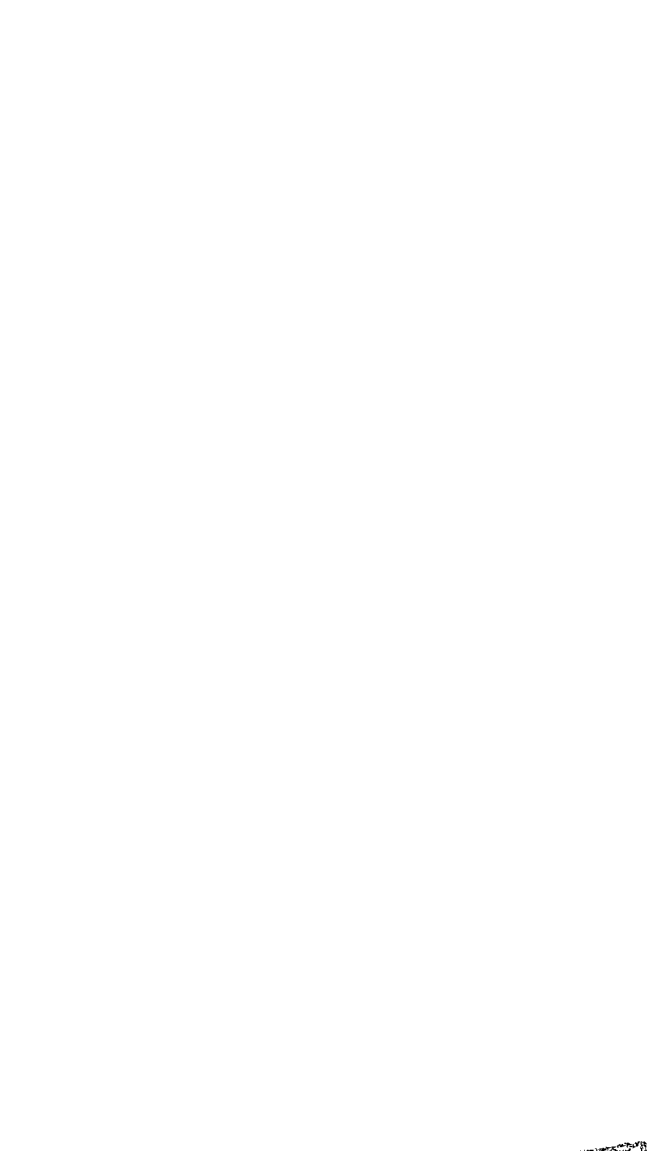
बाबर को अपने राज्य के प्रबन्ध करने का अधिक समय नहीं मिला। वह युद्धों में ही लगा रहा। उसने अपने अफसरों को कई जागीरे दीं और हिमालय से मालवा तक तथा काबुल से बंगाल तक अपने राज्य का विस्तार किया।

हुमायूँ (मन् १५३०-१५५६)—अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् हुमायूँ राज-सिंहासन पर बैठा। हुमायूँ के तीन भाई और थे—कामरान, हिन्दाल और मिर्जा अमकरी। मरते समय बाबर ने हुमायूँ से कहा था कि अपने भाइयों को कष्ट न देना। अनेक दुःख सहन करके भा हुमायूँ ने अपने पिता की यह इच्छा पूरी की। कामरान पंजाब और काबुल का सुवेदार था और हिन्दाल और अमकरी भारत में ही थे।

कामरान हुमायूँ से बड़ा दुःखी रहता था। इस द्वेष के कारण उसने हुमायूँ के माग में अनेक काठनाडियाँ चला कर दीं। हुमायूँ का सना का बड़ा आवश्यकता था परन्तु वह काबुल की ओर सँकड़ सना भरता नहीं कर सकता था। कामरान काबुल में स्वतन्त्र हो गया।

अफगानों में युद्ध—ग़ोरा क युद्ध में परास्त हो कर अफगान शान्त नहीं हुए। मन् १५२१ में महमूद लोदी की अध्यक्षता में उन्होंने लखनऊ के समीप एक युद्ध किया। इन में अफगानों की हार हुई। इस के पश्चात् अफगान बिहार के शासक शेरशाह के झण्डे तले एकत्र हुए। इस शेरशाह ने १५३२ में हुमायूँ की अधीनता मान ली।









हिन्दूपति महाराणा प्रताप

1

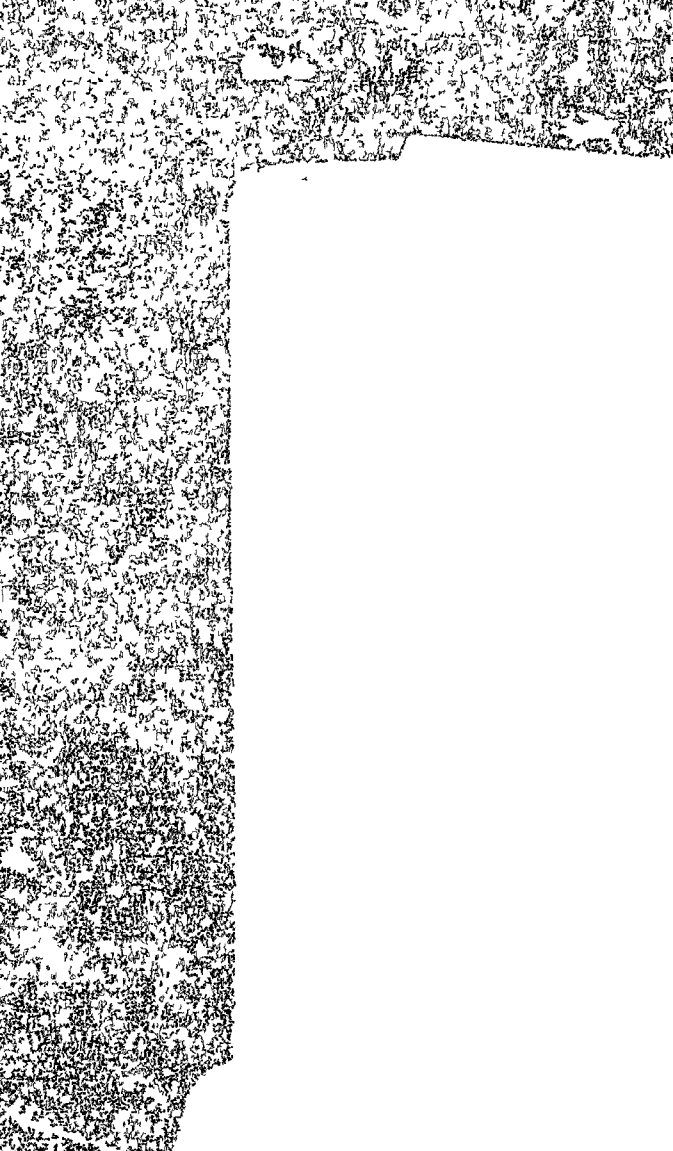
2

3

4

5

6



ने जो कैद कर के ४० वर्ष की आयु में सन् १८५६ में
ने अपना राज्याभिषेक किया।

अंग्रेजों की नीति में भेद—अकबर ने हिन्दुओं को
समस्त का स्वतन्त्रता प्रदान की थी। औरङ्गजेब
ने उनका हिन्दुओं को अपने दरबार से निकाला, मन्दिरों
पर उन पर मसजिदें बनवाई, हिन्दू पाठशालाएँ
बंद कर हिन्दुओं के धर्म प्रचारकों और साधु संन्यासियों
को प्रचार में रोक दिया। सहस्रों लाखों हिन्दुओं को बल
वशात्तः दलित बनाया कई बार हिन्दू धर्म छोड़ देने वालों को
मृत्यु दी। हिन्दुओं के त्योहार बन्द किए और जजिया
को बढ़ा दिया अकबर अपने मित्रों में कपट नहीं
करता था वह न कपट के बिना कभी कुछ सोचा ही
नहीं करता अकबर हिन्दुओं में भी कपट जर जाना था।
अकबर का मकसद यह कि अकबर ने जो भी उपाय
किए वे सब एक ही ध्येय के लिए थे कि वह हिन्दुओं को
अंग्रेजों की नीति से भेद न करे।

अकबर की नीति—अकबर की नीति में दो बातें हैं—
एक तो वह कि अकबर ने हिन्दुओं को समस्त का स्वतन्त्रता
प्रदान की थी। और दूसरी यह कि अकबर ने हिन्दुओं को
अपने दरबार से निकाला, मन्दिरों पर उन पर मसजिदें बनवाई,
हिन्दू पाठशालाएँ बंद कर हिन्दुओं के धर्म प्रचारकों और
साधु संन्यासियों को प्रचार में रोक दिया। सहस्रों लाखों
हिन्दुओं को बलवशात्तः दलित बनाया कई बार हिन्दू धर्म
छोड़ देने वालों को मृत्यु दी। हिन्दुओं के त्योहार बन्द
किए और जजिया को बढ़ा दिया अकबर अपने मित्रों में
कपट नहीं करता था वह न कपट के बिना कभी कुछ सोचा ही
नहीं करता अकबर हिन्दुओं में भी कपट जर जाना था।

सोच-विचार कर उसे आसाम विजय करने भेज दिया। वहाँ का जल वायु उसे अनुकूल न बैठा। कुछ देर रोगी रह कर मीर जुमला सन् १६६१ में वहीं मर गया।

छत्रसाल (सन् १६५०—१७३३)—राजा छत्रसाल बुन्देल खंड का राजा था। वह प्रायः महोदधे में रहा करता था। उस के पिता चपतराय ने औरङ्गजेब को राज्य प्राप्त करने में बड़ी सहायता दी थी। बादशाह चपतराय से भी द्वेष करने लगा। कई युद्ध हुए। सन् १६६४ में एक युद्ध में चपतराय मारा गया। छत्रसाल ने शिवाजी और पेशवा के साथ मित्रता कर ली। बुन्देला सरदार छत्रसाल अपने स्वतंत्रता प्रेम के लिए अमर हो गया है।

सतनामी विद्रोह—किसी सरकारी सिपाही ने एक सतनामी का अपमान किया। सतनामी सम्प्रदाय के लोग निस्पृह और तपस्वी थे। वे नारनौल के आस-पास रहते थे। उन्होंने बादशाह के विरुद्ध विद्रोह किया। कई बार शाही सेना को उन्होंने ने पछाड़ दिया। अन्त को बड़ी कठिनता से बादशाह वह विद्रोह शान्त कर पाया। २००० के लगभग सतनामी मारे गए।

धार्मिक मिक्ख मेंनिक योद्धा बन गए—सन् १६०७ में जहाँगीर ने सिक्खों के गुरु अर्जुनदेव को मरवा डाला था। तब से सिक्खों के अन्दर एक अग्नि जलनी आरम्भ हो गई थी। शाहजहाँ के प्रशान्त राज्य में वह अग्नि बढी नहीं। परन्तु औरङ्गजेब की नवीन वर्मान्विता ने उस अग्नि को बहुत चमका दिया। सन् १६७५ में औरङ्गजेब ने नवम गुरु तेगबहादुर को दिल्ली बुलाया और उन पर एक मुकद्दमा चलाया। गुरु जी पर

जिस समय औरंगजेब मुल्तान की मूर्तियाँ तुड़वा रहा था, उस समय वहाँ से कई मूर्तियाँ सेना में लाई गईं और वहीं उन की प्रतिष्ठा की गई। बादशाह को यह बात ओर भी दुःख लगी।

इतने में औरंगजेब ने जजिया जारी कर दिया। चारों ओर के हिन्दू तंग आ गए। साम्राज्य में कोलाहल मच गया। महाराणा राजमिह ने बहुत सोच विचार कर एक पत्र बादशाह को लिखा— ‘आप के पूर्वज स्वर्गीय अकबरशाह ने २२ वर्ष न्याय से शासन किया। इस प्रकार जहाँगीर ने २२ वर्ष प्रजा की रक्षा की। प्रसिद्ध शाहजहाँ ने भी ३२ वर्ष नेकी से राज्य किया। आप के पूर्वजों की भलाई के कारण ही उन्हें सर्वत्र विजय प्राप्त हुई। अब आप के समय कई सूत्र आप की अधीनता से निकल गए हैं, प्रजा कगाल हो गई है और दुःख बढ़ रहे हैं। कगाल प्रजा पर कर लगाना बादशाह का बड़ापन नहीं है। आपका जजिया न्याय और सुनौति का विरुद्ध है। यदि आपने रुपया लेना है तो मुझ से लें। आप के मन्त्रियों ने आप को उचित सम्मति नहीं दी।’

इस पत्र को पढ़ कर बादशाह बहुत विगड़ा मवाद पर चढ़ाई अब निश्चित होगई। सन् १६७९ में बादशाह एक बड़ी सेना के साथ अजमेर की ओर चल पड़ा। १२ दिन में वह दिल्ली से अजमेर पहुँचा।

बादशाह के प्रस्थान का समाचार पाते ही महाराणा ने अपने कुमार तथा अन्य सामन्त सरदार दरबार में बुलाए। सब सरदारों ने युद्ध के उपायों पर अपनी अपनी सम्मति दी। अन्त में पुरोहित गरीबदास बोला। बादशाह अत्यन्त बलवान है। इसलिये उस

3

1

बनाई इस से उन्होने यह प्रकट किया कि वे समर्थ गुरु रामदास के शिष्य हैं ।

मृत्यु—सन् १६८० में शिवाजी का देहान्त हो गया ।

शिवाजी के काम का फल—सारा महाराष्ट्र देश एकत्र हो गया । दक्षिण के हिन्दुओं को अपना एक सुदृढ़ रक्षक मिल गया । संस्कृत विद्या का प्रचार बढ़ने लगा । गो, ब्राह्मण की रक्षा होने लगी ।

हिन्दुओं में बड़े बड़े शूर उत्पन्न होने लगे । शिवाजी ने अपना जहाजी वेड़ा भी बनाया और राज्य का प्रबन्ध अत्यन्त सुन्दर रूप से किया ।

छत्रपति संभाजी (सन् १६८०--१६८९)—संभाजी छोटी अवस्था से ही व्यसनी हो गया था, फिर भी उसमें अपने पिता की वीरता थी । सन् १६८३ में औरङ्गजेब ने दक्षिण जीतने के लिए बड़ी सेना एकत्र की । संभाजी पुर्तगीजों से लड़ कर उन्हें विजय कर चुका था, उसे बादशाह की चढ़ाई की सूचना मिली । बागलाना स्थान पर मराठों का मुगल सेना से सामना हुआ । मुगल सेना हार गई । बादशाह बीजापुर और गोलकुण्डे को विजय करने चला गया । संभाजी इस विजय से प्रसन्न हो कर व्यसनों में पड़ गया । इस की प्रजा कगाल हो रही थी, कोष खाली था । संभाजी ने राज्य व्यवस्था की ओर ध्यान नहीं किया ।

संभाजी का वध—सन् १६८७ में बादशाह ने मराठों के साथ पुनः युद्ध आरम्भ किया । राजकुमार अकबर संभाजी के पास था । वह तो ईरान की ओर चला गया । बादशाह की सेना से हवीरराव मोहिते का युद्ध हुआ । वह मराठा राज्य का

[illegible]

दातार्जी विम्वनाथ—

2011年12月15日

1000

Figure 1. Schematic diagram of the experimental setup.

[illegible]

$\frac{1}{2}$ $\frac{1}{4}$ $\frac{1}{8}$ $\frac{1}{16}$ $\frac{1}{32}$ $\frac{1}{64}$ $\frac{1}{128}$ $\frac{1}{256}$ $\frac{1}{512}$ $\frac{1}{1024}$ $\frac{1}{2048}$ $\frac{1}{4096}$ $\frac{1}{8192}$ $\frac{1}{16384}$ $\frac{1}{32768}$ $\frac{1}{65536}$ $\frac{1}{131072}$ $\frac{1}{262144}$ $\frac{1}{524288}$ $\frac{1}{1048576}$ $\frac{1}{2097152}$ $\frac{1}{4194304}$ $\frac{1}{8388608}$ $\frac{1}{16777216}$ $\frac{1}{33554432}$ $\frac{1}{67108864}$ $\frac{1}{134217728}$ $\frac{1}{268435456}$ $\frac{1}{536870912}$ $\frac{1}{1073741824}$ $\frac{1}{2147483648}$ $\frac{1}{4294967296}$ $\frac{1}{8589934592}$ $\frac{1}{17179869184}$ $\frac{1}{34359738368}$ $\frac{1}{68719476736}$ $\frac{1}{137438953472}$ $\frac{1}{274877906944}$ $\frac{1}{549755813888}$ $\frac{1}{1099511627776}$ $\frac{1}{2199023255552}$ $\frac{1}{4398046511104}$ $\frac{1}{8796093022208}$ $\frac{1}{17592186044416}$ $\frac{1}{35184372088832}$ $\frac{1}{70368744177664}$ $\frac{1}{140737488355328}$ $\frac{1}{281474976710656}$ $\frac{1}{562949953421312}$ $\frac{1}{1125899906842624}$ $\frac{1}{2251799813685248}$ $\frac{1}{4503599627370496}$ $\frac{1}{9007199254740992}$ $\frac{1}{18014398509481984}$ $\frac{1}{36028797018963968}$ $\frac{1}{72057594037927936}$ $\frac{1}{144115188075855872}$ $\frac{1}{288230376151711744}$ $\frac{1}{576460752303423488}$ $\frac{1}{1152921504606846976}$ $\frac{1}{2305843009213693952}$ $\frac{1}{4611686018427387904}$ $\frac{1}{9223372036854775808}$ $\frac{1}{18446744073709551616}$ $\frac{1}{36893488147419103232}$ $\frac{1}{73786976294838206464}$ $\frac{1}{147573952589676412928}$ $\frac{1}{295147905179352825856}$ $\frac{1}{590295810358705651712}$ $\frac{1}{1180591620717411303424}$ $\frac{1}{2361183241434822606848}$ $\frac{1}{4722366482869645213696}$ $\frac{1}{9444732965739290427392}$ $\frac{1}{18889465931478580854784}$ $\frac{1}{37778931862957161709568}$ $\frac{1}{75557863725914323419136}$ $\frac{1}{151115727451828646838272}$ $\frac{1}{302231454903657293676544}$ $\frac{1}{604462909807314587353088}$ $\frac{1}{1208925819614629174706176}$ $\frac{1}{2417851639229258349412352}$ $\frac{1}{4835703278458516698824704}$ $\frac{1}{9671406556917033397649408}$ $\frac{1}{19342813113834066795298816}$ $\frac{1}{38685626227668133590597632}$ $\frac{1}{77371252455336267181195264}$ $\frac{1}{154742504910672534362390528}$ $\frac{1}{309485009821345068724781056}$ $\frac{1}{618970019642690137449562112}$ $\frac{1}{1237940039285380274899124224}$ $\frac{1}{2475880078570760549798248448}$ $\frac{1}{4951760157141521099596496896}$ $\frac{1}{9903520314283042199192993792}$ $\frac{1}{19807040628566084398385987584}$ $\frac{1}{39614081257132168796771975168}$ $\frac{1}{79228162514264337593543950336}$ $\frac{1}{158456325028528675187087900672}$ $\frac{1}{316912650057057350374175801344}$ $\frac{1}{633825300114114700748351602688}$ $\frac{1}{1267650600228229401496703205376}$ $\frac{1}{2535301200456458802993406410752}$ $\frac{1}{5070602400912917605986812821504}$ $\frac{1}{10141204801825835211973625643008}$ $\frac{1}{20282409603651670423947251286016}$ $\frac{1}{40564819207303340847894502572032}$ $\frac{1}{81129638414606681695789005144064}$ $\frac{1}{162259276829213363391578010288128}$ $\frac{1}{324518553658426726783156020576256}$ $\frac{1}{649037107316853453566312041152512}$ $\frac{1}{1298074214633706907132624082305024}$ $\frac{1}{2596148429267413814265248164610048}$ $\frac{1}{5192296858534827628530496329220096}$ $\frac{1}{10384593717069655257060992658440192}$ $\frac{1}{20769187434139310514121985316880384}$ $\frac{1}{41538374868278621028243970633760768}$ $\frac{1}{83076749736557242056487941267521536}$ $\frac{1}{166153499473114484112975882535043072}$ $\frac{1}{332306998946228968225951765070086144}$ $\frac{1}{664613997892457936451903530140172288}$ $\frac{1}{1329227995784915872903807060280344576}$ $\frac{1}{2658455991569831745807614120560689152}$ $\frac{1}{5316911983139663491615228241121378304}$ $\frac{1}{10633823966279326983230456482242756608}$ $\frac{1}{21267647932558653966460912964485513216}$ $\frac{1}{42535295865117307932921825928971026432}$ $\frac{1}{85070591730234615865843651857942052864}$ $\frac{1}{170141183460469231731687303715884105728}$ $\frac{1}{340282366920938463463374607431768211456}$ $\frac{1}{680564733841876926926749214863536422912}$ $\frac{1}{1361129467683753853853498429727072845824}$ $\frac{1}{272225893536750770770699685$

63551-63560

Abstract

भी व्यसनी हो गया और राज्य का मारा भार बाजीराव ऊपर पड़ गया ।

मराठों के चार राज्य—बाजीराव के काल में मराठों के चार राज्य स्थापित हो गए । गायकवाड़ का गुजरात में, होल्कर का इन्दौर में, सिन्धिया का ग्वालियर में और रावोजी भोसले का मध्य भारत में । ये चारों राजा पेशवा के प्रति अत्यन्त आदर और सम्मान रखते थे । बाजीराव के काल में मराठों ने दिल्ली तक जा कर लूटमार करना आरम्भ कर दिया ।

बालाजी बाजीराव (सन् १७४०—१७६१)—

बालाजी बाजीराव छोटी आयु में ही पेशवा बन गया । वह भी अपने पिता के समान चतुर और बुद्धिमान था । सन् १७४६ में शाहू मर गया । उस का राज्य ४८ वर्ष तक रहा । वह राजा था नाममात्र का । राज्य का वास्तविक संचालन पेशवा ही करता था । अब उस की मृत्यु के पश्चात् पेशवा का अधिकार और भी बढ़ गया । पेशवा के परिश्रम से मराठा राज्य दूर दूर तक फैल गया । मराठा सरदार उत्तर तक आ कर चौथ और सरदेशमुखी प्राप्त करते थे । इस के बदले वे कर देने वालों को न स्वयं लूटते थे, और न औरों से लूटा जाने देते थे ।

सन् १७५६ में अहमदशाह अब्दाली ने दिल्ली में लूट मार की । वह मथुरा तक पहुँचा और उस ने वहाँ सहस्रों हिन्दू कत्ल किए । मराठे अपने आप को उत्तर भारत का अधिकारी समझते थे । अब्दाली के इस कर्म के बदले में सन् १७५८ में मराठा सरदार बाजीराव ने पञ्जाब को अपने अधिकार में कर लिया । वह सिन्ध की सीमा तक पहुँच गया । मराठों के वैभव की यह पराकाष्ठा थी ।

